Master of Arts (Economics) (DDE)

Semester – II

Paper Code – 20ECO22C3

Economics of Growth and Development – II

संवृद्धि एवम् विकास का अर्थशास्त्र – II

DIRECTORATE OF DISTANCE EDUCATION

MAHARSHI DAYANAND UNIVERSITY, ROHTAK

(A State University established under Haryana Act No. XXV of 1975)

NAAC 'A+' Grade Accredited University

Material Production

Content Writer: *Dr. Parveen Kumar*

Copyright © 2020, Maharshi Dayanand University, ROHTAK

All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

ISBN :

Price : Rs. 325/-

Publisher: Maharshi Dayanand University Press

Publication Year : 2021

Master of Arts (Economics)

Semester –II

Economics of Growth and Development – II

Paper Code – 20ECO22C3

इकाई–1

विकास के क्षेत्रीय मुद्दे; कृषि और उद्योग का आर्थिक विकास में महत्त्व संस्थाओं का महत्त्व, संस्थाओं का महत्व – सरकार और बाजार, गरीबी – सूचक और माप

इकाई–2

व्यापार और विकास : व्यापार वृद्धि के इंजन के रूप में, द्वि–अन्तराल मॉडल, प्रेबिश, सिंगर और मिर्डल के विचार, व्यापार से लाभ और अल्प विकसित देश, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और बहु–राष्ट्रीय निगमों का उभरते हुए देशों में योगदान

इकाई–3

मौदिक और राजकोषीय नीति का आर्थिक विकास में योगदान; तकनीक का चुनाव और उचित तकनीक : निवेश की कसौटी; लागत–लाभ विश्लेषण

इकाई–4

योजना की तकनीक; भारत में योजना मॉडल; बाजार–निर्देशित अर्थव्यवस्था में योजना; अर्न्तजात वृद्धि; शिक्षा, अनुसंधान और ज्ञान की भूमिका – विभिन्न देशों के वृद्धि और विकास के अन्तर के रूप में व्याख्या

परिचय

आर्थिक विकास को विकासशील देशों के आर्थिक चिन्तन का महत्त्वपूर्ण बिन्दु माना जाता है। परन्तु आर्थिक विकास केवल अल्पविकसित देशों तक ही सीमित नहीं है। आर्थिक विकास का विकसित क्षेत्रों के लिए भी उतना ही योगदान हे। आर्थिक विकास का विकासशील और विकसित देशों के लिए बराबर –बराबर योगदान है। 1929 की महामन्दी और द्वितीय विश्व युद्ध जैसी घटनाओं ने आर्थिक विकास की समस्याओं पर विचार करने को विवश कर दिया था। आर्थिक विकास के सिद्धान्तों को वृद्धि का अर्थशास्त्र, अर्थविकास का अर्थशास्त्र, विकास का अर्थशास्त्र जैसे नामों से जाना जाता है।

इस पुस्तक को चार इकाईयों में बांटा गया है। पहली इकाई में कृषि और उद्योग का आर्थिक विकास में योगदान के बारे में और संस्थाओं का विकास में योगदान के सम्बन्ध में अध्ययन करेंगे। संस्थाओं का तात्पर्य यहाँ पर सरकार तथा बाजार से है। इसी तरह गरीबी का अध्ययन करना भी अल्पविकसित देशों के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण है। दूसरी इकाई का सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश से है। व्यापार से लाभ के सम्बन्ध में अर्थशास्त्री दो भागों में बँटे हुए है। एक विचारधारा अन्तर्राष्टीय व्यापार के लाभों के बारे में बात करते है और दूसरी विचारधारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के दुष्प्रभाव के सम्बन्ध में बात करते है। तीसरी इकाई में हम मौद्रिक व राजकोषीय नीतियों के प्रभाव और लागत लाभ विश्लेषण का अध्ययन करेंगे। केन्जीयन अर्थशास्त्री राजकोषीय नीति पर अधिक बल देते है और क्लासिकल अर्थशास्त्री मौद्रिक नीति की भूमिका पर अधिक बल देते है। कुछ अर्थशा़स्त्री आर्थिक विकास में राजकोषीय नीति और मौद्रिक नीति दोनों की भूमिका पर बल देते है। उनके अनुसार केवल एक नीति से आर्थिक विकास संभव नहीं हो पाता है। चौथी इकाई में आर्थिक विकास में योजना की भूमिका का अध्ययन करेंगे। आयोजन के कई प्रकार हो सकते है। भारत में लोकतांत्रिक देश में आयोजन को अपनाया है। इसके लिए भारत ने योजना आयोग को बनाकर विभिन्न पंचवर्षीय का निर्माण किया है।

डॉ0 प्रवीन कुमार

सहायक प्राध्यापक

राजकीय महाविद्यालय, जाटुसाना, रेवाडी

विषय–सूची

इकाई 1

1.0 परिचय 1
1.1 इकाई के उद्देश्य 2
1.2 विकास के क्षेत्रीय मुद्दे 2
1.3 कृषि और उद्योग का आर्थिक विकास में योगदान 3
1.3.1 कृषि का आर्थिक विकास में योगदान 3
1.3.2 उद्योग का आर्थिक विकास में योगदान 4
1.4 संस्थाओं का महत्त्व 6
1.4.1 सरकार का महत्त्व 6
1.4.2 बाजार का महत्त्व 7
1.5 गरीबी 8
1.5.1 गरीबी के सूचक 8
1.5.2 गरीबी का माप 9
1.6 सारांश 11
1.7 मुख्य शब्दावली 11
1.8 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न 12
1.9 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर 12
1.10 अभ्यास हेतु प्रश्न 13
1.11 आप ये भी पढ़ सकते है 13

इकाई – 2

2.0 परिचय 14
2.1 इकाई के उद्देश्य 14
2.2 व्यापार विकास के इन्जन के रूप में 15
2.3 द्वि–अन्तराल मॉडल 16
2.4 प्रेबिश, सिंगर और मिर्डल के व्यापार सम्बन्धी सिद्धान्त 18
2.5 व्यापार से लाभ और अल्पविकसित देश 20
2.6 प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 21
2.7 बहू राष्ट्रीय निगम 23
2.8 सारांश 25
2.9 मुख्य शब्दावली 25
2.10 अपनी प्रगति जनिए के प्रश्न 25
2.11 अपनी प्रगति जनिए के उत्तर 25
2.12 अभ्यास हेतु प्रश्न 26
2.13 आप से भी पड़ सकते है 26

इकाई–3

3.0 परिचय 27
3.1 इकाई के उद्देश्य 27
3.2 मौद्रिक नीति का आर्थिक विकास का योगदान 28
3.3 राजकोषीय नीति का आर्थिक विकास में योगदान 29
3.4 तकनीक का चुनाव 31
3.4.1 उचित तकनीक 35
3.5 निवेश की कसौटियाँ 35
3.6 लागत लाभ विश्लेषण 40
3.7 सारांश 42
3.8 मुख्य शब्दावली 42
3.9 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न 42
3.10 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर 43
3.11 अभ्यास हेतु प्रश्न 43
3.12 आप ये भी पढ़ सकते है। 44

इकाई–4

4.0 परिचय 45
4.1 इकाई के उद्देश्य 46
4.2 आर्थिक आयोजन 46
4.3 आयोजन के प्रकार 47
4.4 योजना मॉडल 48
4.5 भारत में योजना मॉडल 49
4.6 बाजार–निर्देशित अर्थव्यवस्था में योजना 52
4.7 अर्न्तजात वृद्धि 52
4.8 शिक्षा, अनुसंधान और ज्ञान की भूमिका–विभिन्न देशों के वृद्धि और विकास के अन्तर के रूप में 53
4.9 सारांश 54
4.10 मुख्य शब्दावली 54
4.11 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न 54
4.12 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर 55
4.13 अभ्यास हेतु प्रश्न 55
4.14 आप ये भी पढ़ सकते हो 55

इकाई – 1

इकाई की रूपरेखा

1.0 परिचय

1.1 इकाई के उद्देश्य

1.2 विकास के क्षेत्रीय मुद्दे

1.3 कृषि और उद्योग का आर्थिक विकास में योगदान

1.3.1 कृषि का आर्थिक विकास में योगदान

1.3.2 उद्योग का आर्थिक विकास में योगदान

1.4 संस्थाओं का महत्त्व

1.4.1 सरकार का महत्त्व

1.4.2 बाजार का महत्त्व

1.5 गरीबी

1.5.1 गरीबी के सूचक

1.5.2 गरीबी का माप

1.6 सारांश

1.7 मुख्य शब्दावली

1.8 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

1.9 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

1.10 अभ्यास हेतु प्रश्न

1.11 आप ये भी पढ़ सकते है

1.0 परिचय

विकास के अर्थशास्त्र का विकसित व विकासशील दोनों देशों के लिए एक समान महत्त्व है। विकसित देश इसकी सहायता से इस विकास की गति को निरन्तर बनाएं रखने के लिए प्रयत्न करते है और विकासशील देश अपनी अल्पविकसित अर्थव्यवस्था को विकसित अर्थव्यवस्था बनाने के लिए संघर्ष करते है। इसलिए विकास के अर्थशास्त्र का दोनों देशों की श्रेणियों के लिए बराबर महत्त्व है। इस इकाई में राष्ट्रीय आय में भी प्राथमिक, द्वितीयक और सेवा क्षेत्र के भाग का अध्ययन करेंगे और फिर कृषि और उद्योग की विकास में भूमिका का अध्ययन करेंगे। यह अध्ययन करना भी बड़ा महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि विभिन्न संस्थाओं जैसे बाजार और सरकार की आर्थिक विकास में क्या भूमिका रहेगी। इसके बाद अल्पविकसित देश जैसे की भारत में गरीबी का अध्ययन करना बडा महत्वपूर्ण हो जाता है।

1.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के निम्न उद्‌देश्य है

विकास के क्षेत्रीय मुद्‌दों का अध्ययन करना

कृषि और उद्योग का आर्थिक, विकास में योगदान का अध्ययन करना

सरकार और बाजार जैसी संस्थाओं का अध्ययन करना

गरीबी के सूचक और मापक का अध्ययन करना

1.2 विकास के क्षेत्र का मुद्‌दे

विकास के क्षेत्रीय मुद्‌दों से अभिप्राय विकास के साथ विभिन्न क्षेत्रों के राष्ट्रीय आय में उनके भाग में परिवर्तन से है। हम जानते है कि अर्थव्यवस्था के तीन क्षेत्र होते हैं, पहला कृषि, दूसरा औद्योगिक ओर तीसरा सेवा क्षेत्र। राष्ट्रीय उत्पाद या राष्ट्रीय आय में तीनों क्षेत्रों का हिस्सा होता है। परन्तु विकास की प्रत्येक अवस्था में तीनों क्षेत्रों के हिस्से में परिवर्तन होता रहता है। अलग–अलग देशों का यह अनुभव अलग–अलग रहा है। अर्थशास्त्री कुजनेट्स ने बताया कि विभिन्न क्षेत्रों के राष्ट्रीय आय में उनके भाग में परिवर्तन हुए है। आर्थिक वृद्धि के साथ कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों का हिस्सा कम होता रहता है। उद्योग और सेवा क्षेत्र का हिस्सा बढ़ता रहता है।

1. कृषि क्षेत्र

कुजनेट्स के अनुसार 13 देशों में से 12 विकसित देशों में कुल उत्पाद में से कृषि क्षेत्र का हिस्सा घटा है परन्तु एक देश में कृषि क्षेत्र का हिस्सा स्थिर रहा है। यह देश आस्ट्रेलिया है जिसमें कृषि क्षेत्र का हिस्सा 23 प्रतिशत रहा है। कृषि के भाग में कमी का कारण ऐंजल का उपभोग का नियम है। ऐंजल के नियम के अनुसार जैसे–जैसे राष्ट्रीय आय बढ़ती है वैसे–वैसे कृषि उत्पादों की माँग बढ़ने की दर कम हो जाती है और साथ ही साथ टिकाऊ वस्तुओं की माँग बढ़ने लगती है और औद्योगिक क्षेत्र का हिस्सा बढ़ने लगता है। इसलिए कृषि क्षेत्र का हिस्सा घटता है।

2. औद्योगिक क्षेत्र

कई देशों में राष्ट्रीय आय में विनिर्माण क्षेत्र हिस्सा बढ़ा है। फिशर तथा क्लार्क ने प्राथमिक, द्वितीयक तृतीयक क्षेत्रों के बीच विभिन्न अवस्थाओं में पाये जाने वाले सम्बन्ध के आधार पर क्षेत्रक दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया है। इस दृष्टिकोण के अनुसार शुरू में कृषि से औद्योगिक क्षेत्र की और संसाधनों का हस्तान्तरण होता है। कृषि क्षेत्र में लगे हुए प्रछन्न बेरोजगार औद्योगिक क्षेत्र में हस्तान्तरित होते है। जिससे औद्योगिक क्षेत्र का उत्पादन बढ़ता है। 2011–12 आधार वर्ष के अनुसार राष्ट्रीय आय (GVA) में कृषि क्षेत्र का हिस्सा 17.6 प्रतिशत औद्योगिक क्षेत्र का हिस्सा 29.7 प्रतिशत तथा सेवा क्षेत्र का हिस्सा 52.7 प्रतिशत रहा है।

3. सेवा क्षेत्र

क्षेत्रक दृष्टिकोण के अनुसार विकास के आरंभ में कृषि क्षेत्र में बहुत अधिक श्रमिक तथा 20 प्रतिशत से कम श्रमिक औद्योगिक क्षेत्र में लगे होते है। सेवा क्षेत्र में बहुत कम श्रमिक लगे होते है। परन्तु विकास के साथ श्रमिक कृषि क्षेत्र से द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्र में श्रमिक बढ़ते रहत है। विकसित देशों में 60 प्रतिशत से अधिक श्रमिक सेवा क्षेत्र में लगे रहते हैं। विकसित देशों में 60 प्रतिशत से अधिक श्रमिक सेवा क्षेत्र में लगे हुए है। आय बढ़ने के साथ सेवाओं की माँग भी बढ़ती रहती है। विज्ञापन तथा वित्तीय सेवाओं की माँग का औद्योगीकरण के साथ बढ़ती रहती है। नगरीकरण बढ़ने के साथ पुलिस, जनस्वास्थ्य, शिक्षा आदि क्षेत्रों में सरकारी नौकरियों की माँग बढी है। इसी के

साथ मनोरंजन सेवाओं की माँग भी बढ़ती रहती है। इस प्रकार द्वितीयक तय सेवा क्षेत्र में रोजगार का घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है। कुजनेट्स के अनुसार, तकनीकी परिवर्तन की दर ऊँची होने पर उत्पादन में संरचनात्मक परिवर्तन होते है। तकनीकी परिवर्तन से नए तरीके निकालते है, जिससे नए उद्योगों को आधार मिलता है।

1.3 कृषि और उद्योग का आर्थिक विकास में योगदान

पुराने समय से कृषि की आर्थिक विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। कृषि का योगदान महत्त्वपूर्ण तथा सहयोग देने वाला रहा है। इसका मुख्य उदेश्य यह है की लोगो को कम कीमत पर पर्याप्त मात्रा में खाद्य पदार्थ अर्थात् भोजन की प्राप्ति हो तथा औद्योगिक अर्थव्यवस्था के विकास के लिए मानव शक्ति उपलब्ध कराई जाती हैं। औद्योगिक क्षेत्र को भी आर्थिक विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण समझा जाता है। विकास अर्थशास्त्रियों द्वारा माना गया है की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए कृषि की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही है और विशेषतया तो विकासशील देशों के लिए माना जाता है। कृषि द्वारा घरेलू मांग को पूरा किया जाता है। इसके द्वारा बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति को पूरा किया जाता है। कृषि द्वारा पूंजी निर्माण में भी योगदान दिया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भी भूमिका होती है कृषि की। कृषि द्वारा ग्रामीण अर्थव्यवस्था की गरीबी को भी दूर किया जाता है। कृषि द्वारा कच्चा माल भी उपलब्ध कराया जाता है उद्योगों को। अतः कहा जा सकता है की एक देश के आर्थिक विकास में कृषि का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है।

आर्थिक विकास की एक एक अन्य प्रणाली औद्योगिकरण भी है। इसमें विकास की ऊंची दर को अर्थव्यवस्था में राष्ट्रीय साधनों के एक बड़े हिस्से द्वारा बनाया रखा जा सकता है। औद्योगीकरण के कारण अर्थव्यवस्था में नई–नई तकनीकों का आगमन होता है। इन सब के द्वारा सामाजिक पिछडेपन को दूर किया जा सकता है। औद्योगिकरण अत्पविकसित देशों के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। औद्योगीकरण के कारण ढांचा सम्बन्धी बदलाव भी अर्थव्यवस्था में आते है। व्यावसायिक ढांचे मे भी बदलाव आते है। औद्योगीकरण के कारण सामाजिक बदलाव भी आते है। नई – नई तकनीकों को कृषकों द्वारा अपना कर खेती की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। खांद्य पदार्थों को अच्छी प्रकार से तथा कुशल ढंग से बढ़ाया दिया जाता है। औद्योगीकरण के कारण बढ़ते प्रतिफल प्राप्त किए जाते है तथा बचतों का पैमाना भी प्राप्त होता है।

1.3.1 कृषि का आर्थिक विकास में योगदान

कृषि को सभी उद्योगों की जननी माना जाता है। कृषि को आर्थिक विकास की कुंजी भी कहा जाता है। कृषि का आर्थिक विकास में योगदान इस प्रकार हैः

(1) **खाद्य सामग्री की मांग की आपूर्तिः–** भारत में जनसंख्या का दबाव दिन – प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्य – आपूर्ति भी तेजी से बढ़ रही है। अत्पविकसित देशों मे कृषि का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि जनसंख्या बढ़ने के कारण खाद्य पदार्थो की मांग भी बढ़ती है और इन देशों में खाद्य – साम्रमी की मांग की आय – लोच काफी ऊंची होती है। कृषि द्वारा बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्य – सामग्री की मांग की पूर्ति की जाती है। अतः कहा जा सकता है की कृषि द्वारा खाद्य – सामग्री की पूर्ति की जाती है।

(2) **उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्तिः** रोस्टोव द्वारा कृषि को औद्योगिक विकास की आधारशिला माना गया है। औद्योगिक के लिए जो कच्चे माल की आवश्यकता होती है उसे कृषि क्षेत्र द्वारा ही पूरा किया जाता है। यदि कृषि क्षेत्र की मन्द गति होती है तो उद्योगों की स्वयं मन्द गति हो जाती है। कई प्रकार के ऐसे उद्योग है जो कृषि पर निर्भर है जैसे चीनी उद्योग, जूट उ़द्योग, वनस्पति उद्योग आदि।

यदि कृषि का विकास होता है तो उद्योगों का स्वयं हो जाता है। अतः कृषि द्वारा उद्योगों को कच्चे माल की पूर्ति की जाती है।

(3) **भारी मात्रा में रोजगार की प्राप्ति :** कृषि द्वारा अत्यधिक मात्रा में रोजगार दिलाया जाता है। इसके द्वारा बढ़ती हुई जनसंख्या को भी रोजगार दिलाया जाता है। कृषि तथा सम्बन्धित क्षेत्र में काम करने वाली जनसंख्या 1972–73 में 73.9 प्रतिशत थी। 1993–94 में यह प्रतिशत गिर कर 64.5 प्रतिशत हो गया। 2011–12 में यह और भी ज्यादा गिर कर 48.9 प्रतिशत हो गया। 2016 में कृषि द्वारा 40 प्रतिशत कामगार पुरूषों को रोजगार मिला तथा 62 प्रतिशत महिला कामगारों का कृषि द्वारा रोजगार मिला। जो अल्पविकसित देश होते है वो अधिकतर कृषि पर ही निर्भर होते है। अतः कृषि द्वारा अत्यधिक मात्रा में रोजगार दिलाया जाता है।

(4) **औद्योगिक माल के लिए मांग को बढ़ानाः** उद्योगों द्वारा जो माल तैयार किया जाता है उसके लिए कृषि क्षेत्र द्वारा बाजार तैयार किया जाता है। क्योंकि जब कृषि कार्य में लगे लोगों की उत्पादकता में वृद्धि होती है तो ग्रामीण जनसंख्या की आय में वृद्धि होती है। उनकी आय में वृद्धि होने पर जो उद्योगों द्वारा माल तैयार किया जाता है उनकी कृषकों द्वारा मांग की जाती है और इस प्रकार औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार होता है। अतः कहा जा सकता है की कृषि द्वारा कृषकों के लिए औद्योगिक माल की मांग बढ़ जाती है।

(5) **पूंजी निर्माण में योगदानः** आर्थिक विकास के लिए पूंजी निर्माण अत्यंत महत्वपूर्ण है। अल्पविकसित देशों में दो तरह की बाते होती है एक तो, उनके पास पूंजी की भारी मात्रा में कमी होती है तथा दूसरी ओर उन्हें उद्योगों की स्थापना के लिए अत्यंत मात्रा में निवेश की आवश्यकता होती है। इन दोनों के बावजूद कृषि द्वारा पूंजी निर्माण होता है। क्योंकि जो हम पहले बात कर चुके है की कृषि उत्पादकता बढ़ती है तो ऐसा होने पर आय भी बढ़ जाती है और आय के बढ़ने पर कृषकों की बचत करने में भी वृद्धि हो जाती है दूसरी तरफ कृषि क्षेत्र में अत्यधिक मात्रा में पूंजी –प्रधान तकनीको का प्रयोग नहीं किया जाता और इनके साथ ही उत्पादकता में वृद्धि की जाती है। अतः कहा जा सकता है पूंजी निर्माण को बढ़ाया जा सकता है बिना जीवन – स्तर को कम किए।

(6) **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढावा देना :** कृषि द्वारा कई सालों से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा मिला है। सूती – वस्त्र, जूट और चाय का भारी मात्रा में भारत से निर्यात किया जाता है। इनके निर्यात से भारत को 50 प्रतिशत के लगभग प्राप्ति होती है। 1960–61 में कुल निर्यात का कृषि निर्यात 44.2 प्रतिशत रहा तथा 1980–81 में यह गिर कर 30.7 प्रतिशत रहा और 2011–12 में यह ओर भी गिर कर 11.8 प्रतिशत हो गया।

(7) **गरीबी में कमी :** अभी भी काफी मात्रा में लोग कृषि से जुड़े हुए है। कृषि लोगों की जीवीका का साधन है। जिन लोगों को कोई रोजगार नहीं मिलता वो सभी कृषि के द्वारा अपनी जीविकात्पर्जन करते है। कृषि द्वारा गरीबी में कमी की जाती है। क्योंकि जब लोगों के पास कुछ भी नहीं होता है तो वो सीधे कृषि से जुड़ते है और अपने लिए खाद्य आपूर्ति तो कर ही लेते है। अतः कहा जा सकता है की कृषि द्वारा गरीबी में भी कमी होती है।

1.3.2 उद्योग का आर्थिक विकास में योगदानः

आर्थिक विकास के लिए कृषि के महत्त्व को जानकार हम यह नहीं कह सकते की आर्थिक विकास के लिए औद्योगिकरण की कोई आवश्यकता नहीं है। औद्योगिकरण को आर्थिक विकास की एक आधारभूत कसौटी माना गया

है। कुछ अर्थशास्त्रियों द्वारा माना गया है की कृषि की अपेक्षा औद्योगिकरण पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। औद्योगिकरण का आर्थिक विकास में योगदान इस प्रकार हैः

(1) **कृषि के लिए साधनों की पूर्तिः** वो अल्पविकसित देश जहां पर जनसंख्या की अधिकता होती है वहां पर खेती करने के लिए अत्यधिक मात्रा में दबाव होता है। इस प्रकार कि क्रिया के कारण किसानों द्वारा परम्परागत तरीको को ही अपनाया जाता है। उनके द्वारा इतनी मात्रा में इन्तजार करना संभव नहीं होता की कृषि करने के तरीको में परिवर्तन किया जा सके। अतः खेती के लिए उत्पादकता को बढ़ाने के लिए रासायनिक खाद, मशीनरी आदि की अत्यंत आवश्यकता होती है।

(2) **पैमाने की किफायतेः** आर्थिक विकास के लिए औद्योगिकरण अति आवश्यक है। अल्पविकसित देशों के लिए तो और भी आवश्यक हो जाता है। औद्योगिकरण के कारण बढ़ते प्रतिफल तथा पैमाने की किफायते प्राप्त होती है और इनके कारण पूंजी में वृद्धि होती है। कृषि में जिस भी प्रकार के अनुसंधान होते है या फिर तकनीकी सुधार होते है वो सभी औद्योगीकरण के कारण होते है जिनके कारण उत्पादकता मे बढ़ोतरी होती है।

(3) **बेरोजगारी में कमी करनाः** औद्योगिकरण की इसलिए भी अत्यंत मात्रा में आवश्यता है की इसके कारण बेरोजगार और अल्परोजगार की समाप्ति की जा सकती है। कृषि में व्यक्तियों का सीमांत उत्पाद शून्य होता है जबकि उद्योग में श्रम का सीमान्त उत्पाद अधिक होता है। जब शून्य सीमान्त उत्पाद से अधिक सीमान्त उत्पाद की और स्थानान्तरण होता है तो कुल उत्पाद बढ़ता है। अतः औद्योगीकरण के कारण बेरोजगारी में कमी होती है अत्यंत मात्रा में।

(4) **नई– नई तकनीकों का आविष्कारः** औद्योगिकरण के कारण नई–नई तकनीकों का आविष्कार होता है जोकी उत्पादन बढाने में सहायक होती है। कुल उत्पादन के बढने के कारण एक अर्थव्यवस्था आगे की तरफ अग्रसर होती है। जो हम नई–नई तकनीकों के आविष्कार की बात कर रहे है यह औद्योगिकरण के कारण ही संभव है।

(5) **कृषक वस्तुओं का व्यापारीकरणः** कृषि का व्यापारीकरण औधोगिकरण के कारण होता है। कृषि के व्यापारीकरण से अभिप्राय है कि कृषि को उतना लाभदायक बनाना जितना कि उद्योग, जिससे कृषि घरेलू और विदेशी मार्केट की मांग पूरी करने की क्षमता रखती हो। कृषकों द्वारा सहायक धन्धे किए जाते है जिसके कारण रोजगार का विविधीकरण हो पाता है। जो ग्रामीण जनसंख्या होती है उसकी प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी होती है।

(6) **शहरीकरण की ओर अग्रसरः** शहरीकरण की ओर अग्रसर की प्रक्रिया औद्योगीकरण के कारण ही संभव होती है। इसके कारण अन्य क्षेत्रों में भी परिवर्तन आते है। कृषि कार्य में लोगों को इतनी आय प्राप्त नहीं हो पाती है की वो अपनी सभी जरूरतों को पूरा कर सके तथा कई लोगों के पास खेती करने के लिए भी भूमि नहीं होती। इसलिए लोगों द्वारा अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए शहरीकरण की ओर पलायन करना पड़ता है।

(7) **सामाजिक रूपान्तरणः** औद्योगीकरण के द्वारा सामजिकक समानता, सामाजिक रूपान्तरण, आय का अधिक न्यायसंगत वितरण तथा संतुलित क्षेत्रीय विकास लाया जाता है जोकी आर्थिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है।

(8) **आधुनिकीरण**: औद्योगीकरण के कारण अत्यधिक मात्रा में आधुनिकीकरण आता है। इन आधुनिकीरण का लाभ ग्रामीण लोगों द्वारा भी उठाया जाता है। आधुनिकीरण के कारण सामाजिक कल्याण में भी वृद्धि होती है।

अतः कहा जा सकता है कि एक अर्थव्यवस्था के विकास के लिए दोनों ही अर्थात् कृषि तथा औद्योगिकरण दोनों ही अति–आवश्यक है।

1.4 संस्थाओं का महत्व

संस्था सामाजिक परम्पराओं के एक समूह की अभिव्यक्ति है जो प्रचलित होकर सामान्य जीवन में स्यायी रूप ले लेती है और समाज उन्हीं के अनुसार 'विचार करने व काम करने का अभ्यस्त हो जाता है। इन में परिवर्तन बहुत ही धीरे – धीरे होता है। इनके द्वारा आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन किया जाता है। इनके द्वारा अपना स्वरूप बनाया भी जाता है तथा बिगाड़ा भी जाता है। लोगों की आदतों का इन पर बहुत ही गहरा असर पड़ता है। प्रो. ई. एस. बोगार्डस द्वारा बताया गया है की एक सामाजिक संस्था को समाज का वह ढांचा माना जाता है जिसके द्वारा सुव्यवस्थित विधियों का प्रयोग करके मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा किया जाए। संस्थाओं की प्रकृति स्थैतिक मानी जाती है जबकि वह प्रावैगिक होती है। इन संस्थाओं के ढांचे व स्वरूप में कुछ परिवर्तन भी होते है। जिस भी प्रकार के परिवर्तन होते है वो सभी बहुत ही मन्द गति से होते है। जो भी संस्थाओं की स्थापना होती है वह दीर्घकालीन प्रकिया होती है। इसमें जिस भी प्रकार का परिवर्तन होता है उसके लिये लम्बे समय की आवश्यकता होती है। संस्थाओं का बटँवारा कई प्रकार से किया जाता है। कुछ मुख्य सामाजिक संस्थायें भी है जो इस प्रकार हैः– (1) सामाजिक वर्ग– विभाजन। आर्थिक विकास पर अत्यंत गहरा प्रभाव पड़ता है सामाजिक वर्ग–विभाजन का। सामाजिक एकता और गतिशीलता पर एक तरह का बेकार ही प्रभाव पड़ता है यदि विभाजन द्वारा कठोर रूप अपनाया जाता है तो। समाज के वातावरण को अत्यंत जहरीला बना दिया जाता है उच्च और निम्न वर्ग की भावनाओं के द्वारा। एक अन्य प्रकार की भी सामाजिक संस्था है जिसे संयुक्त परिवार प्रणाली कहा जाता है। अल्पविकसित देशों में मुख्यतया यह संस्था जिसे संयुक्त परिवार प्रणाली कहा जाता है पायी जाती है। इस संस्था का भी आर्थिक विकास में अत्यंत महत्व पाया जाता है। इस प्रणाली का मुख्य लाभ यह होता है की इसके द्वारा लोगों को सामाजिक सुरक्षा मिलती है। एक अन्य प्रकार की भी संस्था पाई जाती है जो आर्थिक विकास के लिए लाभदायक हो सकती है जिसे उत्तराधिकार का नियम कहा जाता है। उत्तराधिकार के नियम के द्वारा समाज में आर्थिक सुरक्षा को बनाया रखा जा सकता है तथा इसके साथ–साथ धन के समान वितरण और बचत की प्रवृति को भी बनाया जा सकता है। इसके विपरीत कहा जा सकता है की उत्तराधिकार के नियम द्वारा भूमि का अत्यंत मात्रा में उपविभाजन तथा अपखंडन होता है। धर्म भी एक अन्य प्रकार की संस्था है जिसे आर्थिक विकास के लिए उत्प्रेरक तथा अवरोधक दोनों ही माना जाता है।

1.4.1 सरकार का महत्त्व

अल्पविकसित देशों में अत्यंत मात्रा में कई प्रकार की कठोरताएं होती है। और इन कठोरताओं पर काबू पाना अत्यंत अति आवश्यक है। इन सभी के लिए राज्य को निश्चियात्मक कार्य करना चाहिए। राज्य केवल इन सभी कठोरताओं को देख नहीं सकता बल्कि उन्हें आगे आ कर कुछ ठोस कदम उठाने होंगे। अल्पविकसित देशों की समस्याएं बहुत ही अधिक मात्रा में होती है और उन्हें केवल आर्थिक शक्तियों के स्वतंत्र कार्यकरण पर छोड़ा नहीं जा सकता। उन्हें निजी उद्यम द्वारा हल नहीं किया जा सकता। इस प्रकार के देशों के आर्थिक विकास के लिए राज्य – कार्य अनिवार्य है। कई प्रकार की ऐसी क्रियाएं है जिन्हें निजी उद्यमों द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता अर्थात् निजी उद्यम इन कार्यो के लिए तैयार नहीं होते जैसे परिवहन, विद्युत, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि और ये सभी आर्थिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। निजी उद्यमों द्वारा ये कार्य इसलिए नहीं किए जाते क्योंकि इनमें लाभ बहुत ही कम

मात्रा में होते है जबकि जोखिम अधिक मात्रा में होते है। अर्थव्यवस्था में सभी क्षेत्रों के लिए जहां पर वृद्धि होती है उसके लिए संतुलन की आवश्यकता होती है ताकि पूर्ति का मांग से समायोजन किया जा सके। इन सभी के लिए कुछ मौदिक तथा राजकोषीय विधियों को अपनाया जाता है क्योकि अल्पविकसित देशों मे इस प्रकार की विधियों द्वारा ही आर्थिक असमानताओं को दूर, किया जाता है। आर्थिक विकास के लिए एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण विधि है की अल्पपिकसित देशों में लोगों की सामाजिक तथा सांस्कृतिक वृत्तियों में परिवर्तन लाया जाए। लोगों द्वारा नए अवसरों को तब अपनाया जाता है जब सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन शुरू हो जाता है। ऐसा होने पर और अधिक मात्रा में परिवर्तन शुरू हो जाते है। परन्तु इन परिवर्तनों का कारण पता लगाने में अत्यधिक मात्रा में कठिनाई आती है। नए अवसर कई तरह से आ सकते हैं। नई वस्तुओं का निर्माण नए आविष्कारों द्वारा हों सकता है। जब पुरानी वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है तो लागतें घट जाती है सरकार द्वारा अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया जाता है संस्थानिक ढांचे को प्रभावित करके। संस्थानिक परिवर्तनों के साथ–साथ अल्पविकसित देशों के विकास के लिए संगठनात्मक परिवर्तन भी अत्यंत आवश्यक है। संगठनात्मक परिवर्तन द्वारा बाजार के आकार में विस्तार हो जाता है तथा राज्य द्वारा श्रम–बाजार को संगठित भी किया जाता है। जो सरकार द्वारा यातायात एवं संचार के साधनों का विकास किया जाता है वह बाजार का विस्तार करने के लिए किया जाता है। सरकार द्वारा ये कार्य इसलिए किये जाते है क्योंकि ये कार्य निजी क्षेत्र द्वारा नहीं किए जाते। राज्य का एक अन्य कार्य भी है जिसे श्रम बाजार का संगठन कहा गया है। संगठित श्रम–बाजार से उत्पादन में वृद्धि होती है। राज्य के अन्तर्गत एक अन्य प्रकार की भी प्रक्रिया कार्य करती है जोकी अल्पविकसित देशों में सामाजिक तथा आर्थिक उपरि सुविधाएं प्रदान करती है। सामाजिक तथा आर्थिक उपरि–सुविधाओं में कई प्रकार की क्रियाएं शामिल है जैसे – शिक्षा। आर्थिक विकास बिना शिक्षा के संभव नहीं है। प्रोफेसर मिर्डल द्वारा बताया गया है की एक बहुत बड़ी जनसंख्या को निरक्षर छोड़ कर राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम की शुरूआत करने की बात मुझे सही प्रतीत नहीं होती। इसी में एक अन्य भी शामिल है जिसे लोक स्वास्थ्यं तथा परिवार नियोजन कहा गया है। लोक स्वास्थ्य एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें राज्य द्वारा अत्यंत महत्वपूर्ण कदम उठाए जाते है। यदि उत्पादकता तथा श्रमिकों की दक्षता को बढ़ाना है तो लोगो का स्वास्थ्य सुधारा जाना चाहिए। लोक स्वास्थ्य के साथ–साथ परिवार नियोजन का भी महत्व समझना आवश्यक है। सरकार का एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य कृषि का विकास करना भी है। क्योंकि राष्ट्रीय आय में आधे से अधिक भाग कृषि का ही होता है। कृषि का विकास करने के लिए भी कई प्रकार के कार्य किए जाते है जैसे – उत्पादकता में वृद्धि करके कृषि विकास करना तथा भूमि सुधार की प्रक्रिया द्वारा भी आर्थिक विकास किया जा सकता है। सरकार का महत्व प्राकृतिक संसाधनों का विकास करने में भी है। सरकार द्वारा औद्योगिक विकास करने में भी सहायता मिलती है। सरकार द्वारा मौद्रिक नीति अपना कर अर्थव्यवस्था में राज्य मौद्रिक नीति अपनाकर बैंकिंग प्रणाली का विस्तार, साख विस्तार, साख नियंत्रण और कीमतों में स्थिरता लाई जा सकती है। राजकोषीय नीति अपनाकर सरकार द्वारा पूंजी निर्माण को बढ़ाया जा सकता है, बचत को बढावा दिया जा सकता है, निवेश आदि में वृद्धि करके राष्ट्रीय आय और रोजगार को काफी मात्रा में बढ़ाया जा सकता है।

1.4.2. बाजार का महत्व

हैरी जी जॉनसन और उनके – समर्थक अर्थशास्त्रियों ने बताया की बाजार से आर्थिक संवृद्धि बढती है। बाजार से उपभोक्ता अपनी आय को बढाने के लिए कड़ी मेहनत करते है। बाजार की व्यवस्था से भौतिक और मानव दोनों प्रकार की पूंजी में वृद्धि होती है। प्रो. जॉनसान ने बताया है की अगर बाजार अपने आप में मुक्त होकर कार्य करता है तो आर्थिक कुशलता और आर्थिक संवृद्धि दोनों को बढ़ाता है। बाजार का तात्पर्य यहाँ पर एक ऐसी व्यवस्था से जिसमें किसी भी वस्तु और सेवा की कीमत माँग और पूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित होती है। जितनी माँग बढ़ती है, उसी अनुपात में कीमते भी बढती है और उसी प्रकार पूर्ति बढ़ने पर कीमते गिरने लगती है। बाजार व्यवस्था में किसी भी प्रशासन की जरूरत नहीं पड़ती है। एडम स्मिथ ने उसको अदृश्य हाथ का नाम दिया है। विकसित देशो

में बाजार व्यवस्था अपना काम करती है। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाओ मे बाजार की अपूर्णताओ के कारण पूर्ण कुशलता से काम नहीं कर पाती है। कई बार बाजार व्यवस्था के परिणाम हमारे लिए उचित नहीं होते है।

बाजार व्यवस्था अर्थव्यवस्था में उपभोक्ता वस्तुओ का विभिन्न उपभोक्ताओ में वितरण करती है। बाजार व्यवस्था मे लोगो को उनके सीमान्त उप्पादन के अनुसार आय प्रदान की जाती है। इस तरह से लोगो को उनके काम और कार्यक्षमता के अनुसार आय मिलती है। बाजार व्यवस्था में उत्पादक उन उभोक्ताओ को भुगतान करते है जो उस वस्तु का अधिकत भुगतान करने के लिए तैयार होते है। किसी भी उपभोक्ता की केवल इच्छा या जरूरत से उसको वस्तु नहीं मिलती है। बल्कि उसकी क्रय शक्ति क्षमता से उसको वस्तु मिलती है। जिस उपभोक्ता की क्रय शक्ति अधिक होगी उस उपभोक्ता को अधिक वस्तुएं प्राप्त होगी। इसी तरह से एक उत्पादक किन किन वस्तुओ का उत्पादन करेगा यह भी बाजार व्यवस्था पर निर्भर करेगा। एक उत्पादक उस वस्तु का उत्पादन करता है, जिसके बाजार मे मांग अधिक होती है और उत्पादक के लाभ अधिकतक होगें।

1.5 गरीबी

गरीबी को वंचन से सम्बन्धित माना गया है। गरीबी से अभिप्राय है की जीवन को जीने के लिए कुछ अति–आवश्यक वस्तुओ की पूर्ति से वंचित रहने से है। एक व्यक्ति को यदि गरीब कहा जाता है तो इसका अर्थ है की उस व्यक्ति के पास रोटी तथा कपड़ा अर्थात् अति–आवश्यक वस्तु की पूर्ति नहीं हो रही है। आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति न होने के कारण ही उसे गरीब कहा गया है। वैश्विक गरीबी अनुमान व अल्पविकसित देशों के सम्बन्ध में सबसे पहले वर्ल्ड डैवलेपमेन्ट रिपोर्ट 1990 में मिलता है। यू.एन.डी.पी. द्वारा इस तरह की गरीबी को भी माना गया है। मानव गरीबी तब मानी जाती है जब लोगों को सन्तोषजनक जीवन, दीर्घ आयु तथा स्वस्थ रहन–सहन ना मिले। गरीबी की धारणा को दो तरीकों से देखा जा सकता है– (1) परम्परागत या आधारभूत आवश्यकता दृष्टिकोण (ख) बहुआयामीय दृष्टिकोण। गरीबी को निर्धारित करने बहु आयामीय दृष्टिकोण मे अधिक चरों को शामिल किया जाता है। इसके लिए हमे कई प्रत्यागम मिलते है जैसे – (1) तेन्दुलकर कमेटी (2009) दृष्टिकोण (2) बहु आयामीय गरीबी निर्देशांक (MPI) जोकी एम.डी.आर. 2010 में प्रतिपादित है। तथा रंगराजन कमेटी (2012)। गरीबी को विभिन्न रूपों में देखा गया जिनके द्वारा गरीबी की पहचान की जाती है की गरीबी किस प्रकार की है। गरीबी के दो रूप मुख्य है :– (1) सापेक्ष गरीबी तथा निरपेक्ष गरीबी। गरीबी को मापने के लिए भी कई विधियों का प्रयोग किया जाता है जैसे – लारेंज वक तथा गिनी गुणांक। गरीबी से सम्बन्धित कई प्रकार की धारणा भी स्पष्ट की गई है। गरीबी से सम्बन्धित कई कमेटीयां भी निर्धारित की गई है। सामान्यतया योजना आयोग द्वारा जो माप तथा दृष्टिकोण गरीबी रेखा के अनुमान तथा निर्धारण के लिए दिया गया है उसे ही स्वीकार किया गया है। योजना आयोग ने जुलाई 1962 में पहला प्रयास किया भारत में निर्धनता रेखा के निर्धारण के लिए। योजना आयोग ने गरीबी रेखा के निर्धारण तथा जीवन निर्वाह के न्यूनतम स्तर के निर्धारण के सम्बन्ध में एक कार्यदल का गठन किया।

1.5.1 गरीबी के सूचक:

अल्पविकसित देशों में गरीबी दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। भारत में गरीबी के कुछ महत्त्वपूर्ण सूचक है जो इस प्रकार है:

(1) **शिक्षा**: भारत में गरीबी का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण कारण है, शिक्षा की कमी। शिक्षा की कमी के कारण लोगों को ज्ञान नहीं है कि किस प्रकार से कार्य करके गरीबी को दूर किया जा सकता है। लोगों में शिक्षा की प्राप्ति नही हैं परन्तु वो काम करने के लिए उच्च दर पर तैयार होते है जोकि उनको मिलता नहीं है और वो बिना शिक्षा के गरीब ही रह जाते है।

(2) **बेरोजगारी**: गरीबी का एक सूचक बेरोजगारी भी है। भारत जैसे देश में बेरोजगारी की मात्रा अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत में बेरोजागारी भी कई प्रकार की होती है जैसे संघर्षनात्मक बेरोजगारी, छिपी बेरोजगारी आदि। इन में लोग रोजगार में होते हुए भी बेरोजगार होते है। जब अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी होती है तो गरीबी स्वयं आ जाती है क्योंकि लोगों के पास आजीविका के साधन नहीं होते तो वो अपने लिए पर्याप्त मात्रा में भोजन तथा कपड़ा भी नहीं जुटा पाते। अतः बेरोजगारी के कारण गरीबी भी आती है।

(3) **जनसंख्या वृद्धि**: भारत में गरीबी का एक अन्य महत्वपूर्ण सूचक है जनसंख्या वृद्धि की ऊंची दर का पाया जाना। जनसंख्या वृद्धि की यह ऊंची दर निर्धनों में अधिक पाई जाती है। निर्धन जनसंख्या के पास पर्याप्त मात्रा में भोजन तथा कपड़ा नहीं होता। अतः उनका उपभोग कम हो जाता है क्योंकि उनके पास प्रति व्यक्ति आय की कमी होती है। अधिक मात्रा में निर्धन जनसंख्या होने के कारण गरीबी आ जाती है।

(4) **विकास की गलत रणनीति**: गरीबी मुख्य रूप से विकास की गलत रणनीति के कारण भी आती है। हमेशा एक ही तरह की योजना बना कर उसी पर विकास कार्य करना। इसको उदाहरण द्वारा समझाया जा सकता है जैसे – पूंजी गहन परियोजनाओ में अधिक मात्रा में निवेश करना अर्थात् रोजगार – जनन के कम अवसर की प्राप्ति।

(5) **आय का वितरण**: भारत में गरीबी का एक अत्यंत महत्वपूर्ण कारण आय का सभी वर्गो के लिए असमान वितरण भी है। रिजर्व बैंक द्वारा माना गया है की समस्त राष्ट्रीय आय का लगभग 30 प्रतिशत भाग जनसंख्या के 10 प्रतिशत अमीर लोगों के हाथ में है। गरीब लोगो के में हाथ में केवल 8 प्रतिशत है। शहरी क्षेत्र में आय की असमानता का स्तर और भी ज्यादा है।

(6) **मूल्य वृद्धि के कारण**: भारत में विकास कार्य दिन – प्रतिदिन बढ़ते जा रहे है जबकी सरकार के पास इतनी मात्रा में धन की उपलब्धि नही है। इन बढ़ते हुए कार्यों के लिए सरकार को हीनार्थ प्रबन्धन की आवश्यकता होती है। हीनार्थ प्रबन्धन के कारण स्फीतिकारी दबाव और कीमतें बढ़ जाती है। कीमतों के बढ़ने के कारण मुद्रा की क्रय शक्ति घट जाती है और गरीब लोगों को और भी ज्यादा मुद्रा खर्च करनी पड़ती है जिस कारण गरीबी और भी ज्यादा बढ़ जाती है।

(7) **टपकन प्रभाव**: भारत में गरीबी का विरोधाभास भी पाया जाता है विकास के साथ – साथ। जब भारी मात्रा में निवेश किया जाता है तथा उत्पादन में वृद्धि होती है तो इसका लाभ पूरे जन – समूह को नही मिल पाता यह केवल कुछ ही लोगो तक सीमित रह जाता है। अत बहुसंख्यक लोगो की न तो आय बढ़ पाती और न ही उनका उपभोग का स्तर ऊँचा उठ पाता है।

(8) **सामाजिकता के कारण** : सामाजिक कारणों की वजह से भी लोग गरीबी में जीवन व्यतीत कर रहे है। लोग झूठी शान – शौकत के लिए फिजूलखर्च करते है जिसके कारण गरीबी और भी ज्यादा बढ़ी है। फिर, आय और बचत के निम्न – स्तर के परिवेश के ऋणों का उच्च – स्तर, दरिद्रता की कार्यकरण श्रृंखला सिद्ध हुई है।

1.5.2 गरीबी के माप:

गरीबी का माप अति – आवश्यक है ताकि हमें यह पता चल सके की किस प्रकार की गरीबी है तथा इसका निवारण किस प्रकार से किया जा सकता है। गरीबी को मापने के कई तरीके है जो इस प्रकार है।

(1) **सापेक्ष गरीबी**:

सापेक्ष गरीबी द्वारा यह बताया जाता है की विभिन्न आय वर्गों के बीच कितनी मात्रा में विषमता पाई जाती है। जब सापेक्ष गरीबी की स्थिति को बताया जाता है तो इसमें जनसंख्या के विभिन्न आय वर्ग बना लिए जाते है जो चतुर्थांश या दसांश के सम्बन्ध में होते है। इसमें जनसंख्या के जो निचले 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत आय समूह के होते है उनकी तुलना ऊपर के जो 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत आय समूह के होते है उनके साथ की जाती है। जब गरीबी रेखा को मानक के रूप में लिया जाता है तो निरपेक्ष माप सम्भव होता है। एक व्यक्ति को तब निरपेक्ष रूप से गरीब कहा जाता है जब उसकी न्यूनतम आय उसके न्यूनतम उपभोग को उपलब्ध ना करा सके। सापेक्ष मे दूसरे लोगों से तुलना की जाती है। इसका नापने के लिए दो विधियां मुखयता पाई जाती है – लारेंज वक्र विधि तथा गिनी गुणांक। मैक्स ओ लारेंज द्वारा 1905 में लारेंज वक्र की धारणा का विकास किया तथा इटैलियन सांख्यिक कोरेड़ो गिनी द्वारा 1912 में गिनी गुणांक का विकास किया गया। लारेंज वक्र से अभिप्राय है की इस वक्र के प्रत्येक बिन्दु द्वारा उन व्यक्तियों को प्रकट किया जाता है जोकी एक निश्चित आय के प्रतिशत के नीचे है। लारेन्ज वक्र 0 से शुरू होती है तथा 100 पर अन्त करती है। परन्तु जिस चर को नापा जाता है वह ऋणात्मक नहीं होना चाहिए। निरपेक्ष समता रेखा के लारेंज वक्र जितनी पास में होगी, आय विषमता उतनी ही कम होगी। एक अन्य माप गिनी गुणांक भी है। इसके द्वारा आय के प्रत्येक युग्म के बीच आय अन्तर का माप किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति को यदि एक समान आय मिलती है तो $G = 0$ होगा। यदि एक ही व्यक्ति द्वारा पूरी आय प्राप्त की जाती है तो $G = 1$ होगा। गिनी गुणांक का अधिकतम मूल्य एक होगा तथा न्यूनतम मूल्य शून्य होगा। यदि गिनी सूचकांक निकालना है तो गिनी गुणांक को शून्य से गुणा कर दिया जाता है।

एफ.ए. ओ. के प्रथम महानिदेशक आर वायड द्वारा निर्धनता के माप के लिए 1945 में निरपेक्ष प्रतिमान दिया।

(2) **योजना आयोग द्वारा माप**: योजना आयोग द्वारा 1978 में ग्रामीण क्षेत्र के लिए 2400 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्र के लिए 2100 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निर्धारित की। यदि किसी भी व्यक्ति का उपभोग व्यय इस से नीचे है वह गरीब कहलायेगा।

(3) **निर्धनता पर लकड़ावाला विशेषज्ञ दल की अनुशंशाये** : प्रो. डी.टी. लकड़ा वाला की अध्यक्षता मे 1989 में निर्धनता के माप के लिए एक विशेषज्ञ दल का गठन किया गया। इस दल द्वारा 1993 में अपनी रिपोर्ट दी गई। योजना आयोग द्वारा 9 वीं पंचवर्षीय योजना मे लकड़ावाला समिति के सुझावों को अपनाया। इस विशेषज्ञ दल द्वारा अलग – अलग निर्धनता रेखा निर्धारित की गई अलग – अलग राज्यों में उनके अपने मूल्य स्तर के आधार पर। इसके द्वारा शुरू में 28 गरीबी रेखार्य थी जो अब 35 है। इस दल द्वारा कृषि श्रमिको में लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक का सुझाव दिया गया तथा इसी तरह शहरी क्षेत्र के लिए अलग से औद्योगिक श्रमिकों के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक का सुझाव दिया गया।

एशियन डेवेलपमेंट बैंक द्वारा 1.35 डालर तथा भारत द्वारा 1.02 डालर प्रतिदिन आय को माप के रूप में लिया है।

गरीबी के सम्बन्ध में 1967 – 68 में ग्रामीण क्षेत्र में कुछ अनुमान लगाए गए जो इस प्रकार है –

अनुमानकर्ता	ग्रामीण जनसंख्या के प्रतिशत के रूप में गरीबी
बी0 एस0 मिन्हास	37.1
पी0 के0 वर्धन	54.0
वी0 एम0 दांदेकर तथा एन0 के0 रथ (1968 –69)	40

गरीबी के माप के लिए तेन्दुलकर कमेटी: NSSO द्वारा संकलित पारिवारिक उपभोग व्यय सम्बन्धी आकड़ों पर तेंदुलकर कमेटी आधारित है। सुरेश तेन्दुलकर कमेटी भी बहुआयामीय रूप लिये हुए है। यह परम्परागत रूप को नहीं अपनाती है। तेन्दुलकर कमेटी का गठन करने का मुख्य उद्देश्य यह है की क्या वास्तव में भारत में गरीबी गिरी है या नहीं। तेन्दुलकर कमेटी द्वारा अपनी रिपोर्ट 2009 में प्रस्तुत की गई। तेन्दुलकर कमेटी ने माना है की खाद्यान्नों को छोड़कर छः अति आवश्यक – शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी संरचना, स्वच्छ वातावरण तथा महिलाओं की काम **तथा** लाभ तक पहुँच के आधार पर होना चाहिए। तेन्दुलकर कमेटी द्वारा नयी अखिल भारतीय गरीबी रेखा का अनुमान 1993 – 94 तथा 2004 – 05 वर्ष के लिए लाया गया और सरकार द्वारा इसे मान लिया गया। 2004 – 05 मूल्य पर ग्रामीण क्षेत्र के लिए समिति द्वारा 446.68 रूपया माना गय तथा शहरी क्षेत्र के लिए 578.80 रूपया प्रति व्यक्ति प्रति माह माना गया है। तेन्दुलकर कमेटी द्वारा आधार जीवन निर्वाह लागत सूचकांक को बनाया गया है।

गरीबी के माप के लिए रंगाराजन कमेटी: रंगराजन कमेटी ने गरीबी के माप के लिए अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस कमेटी के अनुसार अखिल भारतीय स्तर पर ग्रामीण क्षेत्र के लिए 972 रूपया तथा शहरी क्षेत्र के लिए 1407 रूपया प्रति व्यक्ति प्रति मांसिक उपभोग व्यय को माना गया। गरीबी के माप के लिए रंगराजन द्वारा कोई व्यापक प्रत्यागम नही अपनाया गया। ग्रामीण क्षेत्र में रंगराजन कमेटी के अनुसार गरीबी का अनुपात 2009 – 10 में 36.6 प्रतिशत था। यह घट कर 2011 – 12 में 30.9 प्रतिशत हो गया। शहरी क्षेत्र में यह अनुपात 35.1 प्रतिशत से कम हो कर 26.4 प्रतिशत हो गया।

1.6 साराशः

इस इकाई में हमने कृषि तथा उद्योग का आर्थिक विकास के सम्बन्ध के बारे में पढ़ा है। अल्पविकसित देशो की आधी आबादी से ज्यादा कृषि क्षेत्र पर निर्भर करती है। जबकि कृषि क्षेत्र में प्रछन्न बेरोजगारी पाई जाती है। प्रछन्न बेरोजगारी में कुछ श्रम की सीमान्त उत्पादकता शुन्य हो जाती है। इसलिए सरकार को उद्योग क्षेत्र को और ज्यादा विकसित किया जाना चाहिए, जिससे की कृषि क्षेत्र के श्रमिक उधोग क्षेत्र मे जा सके। उसी तरह हमने, संस्थाओ का विकास में योगदान का अध्ययन किया है। संस्थाएँ यहाँ पर दो तरह की है पहली तो सरकार और दूसरा बाजार। बाजार अदृश्य हाथ की तरह कार्य कहता है। गरीबी भी अल्पविकसित देशो की मुख्य समस्या है। विश्व बैंक के अनुसार आधी से अधिक आबादी गरीबी में रह रही हैं।

1.7 मुख्य शब्दावली:

- **विकास के क्षेत्रक मुद्दे** – विकास के क्षेत्रक मुद्दे से अभिप्राय, विकास के साथ विभिन्न क्षेत्रों के राष्ट्रीय आय में उनके भाग में परिवर्तन से है।
- **कृषि** – कृषि एक विज्ञान एवं कला है जिससे की फसलो का उत्पादन किया जाता है और पशुओं को आर्थिक उद्देश्यो से पाला जाता है।
- **औद्योगीकरण** – औद्योगीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे प्राथमिक उत्पाद को दूसरे उत्पाद में परिवर्तित किया जाता है।
- **संस्थाए** – संस्थाए सामाजिक परम्पराओं के एक समूह की अभिव्यक्ति है जो प्रचलित होकर सामान्य जीवन में स्थायी रूप ले लेती है और समाज उन्हीं के अनुसार विचार करने व काम करने का अभ्यस्त हो जाता है
- **गरीबी** – गरीबी से अभिप्राय है की जीवन को जीने के लिए कुछ अति–आवश्यक वस्तुओ की पूर्ति से वंचित रहने से है।

- **सापेक्ष गरीबी** – सापेक्ष गरीबी से अभिप्राय है कि विभिन्न आय वर्गों के बीच कितनी मात्रा में विषमता पाई जाती है।
- **निरपेक्ष गरीबी** – निरपेक्ष गरीबी से अभिप्राय है जब एक व्यक्ति की न्यूनतम आय उसके न्यूनतम उपभोग को उपलब्ध ना करा सके।
- **लारेंज वक्र** – लारेंज वक्र से अभिप्राय है की एक वक्र के प्रत्येक बिंदु द्वारा उन व्यक्तियों को प्रकट किया जाता है जोकि एक निश्चित आय के प्रतिशत के नीचे है।
- **गिनी गुणांक** – आय के प्रत्येक युग्म के बीच आय अन्तर का माप किया जाता है गिनी गुणांक में।
- **योजना आयोग द्वारा गरीबी का माप** – योजना आयोग द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के लिए 2400 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्र के लिए 2100 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निर्धारित की गई।

1.8 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्नः

1. गरीबी को मूलतः ..... से सम्बान्धित माना जाता है।
2. यू.एन. डी.पी. द्वारा ..... को बताया गया है।
3. गरीबी के दो रूप है (1) ..... तथा .....
4. लारेंज वक्र जितनी ही निरपेक्ष समता रेखा के पास होगी, आय की विषमता उतनी ही ..... होगी।
5. लारेंज वक्र के अलावा सापेक्ष गरीबी के माप की दूसरी विधि .....
6. यदि प्रत्येक व्यक्ति को एक ही आय मिल रही है तो G..... होगा
7. यदि एक ही व्यक्ति को पूरी आय मिल रही है तो G ..... होगा।
8. निरपेक्ष प्रतिमान का सबसे पहले प्रयोग ..... ने किया था।
9. तेन्दुलकर कमेटी ने 2004–05 मूल्य पर ग्रामीण क्षेत्र के लिए ..... प्रति व्यक्ति प्रति माह तथा शहरी क्षेत्र के लिए ..... रूपया मासिक प्रति व्यक्ति उपभोग रखा।
10. रंगराजन कमेटी द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के लिए अखिल भारतीय स्तर पर ..... तथा शहरी क्षेत्र में ..... प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय को गरीबी रेखा के रूप में माना गया है।
11. योजना आयोग द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के लिए ..... कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रति दिन तथा शहरी क्षेत्र के लिए ..... कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निर्धारित की गई है।

1.9 अपनी प्रगति जानिए के उत्तरः

1. वंचन
2. आय गरीबी
3. सापेक्ष तथ निरपेक्ष
4. कम
5. गिनी गुणांक
6. 0

7. 1
8. आर. वायड
9. 446.68 रूपया तथा 578.80 रूपया
10. 972 तथा 1407
11. 2400 तथा 2100

1.10 अभ्यास हेतु प्रश्नः

(लघु उत्तरीय प्रश्न)

1. गरीबी से क्या अभिप्राय है?
2. कृषि तथा उद्योग को परिभाषित करें?
3. विकास के क्षेत्रक मुद्दे क्या है?
4. गरीबी के मुख्य दो रूपों की व्यख्या करें?
5. संस्थाओ से क्या अभिप्राय है?
6. योजना आयोग ने गरीबी को कैसे परिभाषित किया है?
7. गरीबी के माप के लिए तेंदुलकर कमेटी ने क्या बताया?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्नः

1. कृषि और उद्योग का आर्थिक विकास में योगदान की विस्तार से व्याख्या करें?
2. संस्थाओं के महत्व का वर्णन करे तथा सरकार और बाजार के महत्व को भी परिभाषित करें।
3. भारत में गरीबी से क्या अभिप्राय है? गरीबी के सापेक्ष तथा निरपेक्ष दोनों पहलूओं की विस्तार से व्याख्या करें।

1.11 आप ये भी पढ़ सकते है एवम् सन्दर्भ सूची

- Ahuja, H.L. (2017). Development Economics (Ist Edition). New Delhi S. Chand & Company Pvt. Ltd.
- Jhingan, M.L. (2004). The Economics of DevelopmentAnd Planning (4 th edition). New Delhi : Vrinda publication Pvt. Ltd. Hindi medium
- Puri, V.K. & Mishra, S.K. (2019). Indian Economy (37th edition). Mumbai : Himalaya Publishing House Pvt. Ltd.
- Mishra, S.K. & Puri, V.K. (2006). Economics of DevelopmentAnd Planning (12th edition). Mumbai : Himalya Publisnig House
- Singh, S.P. (2007). Economic DevelopmentAnd Planing (21st Edition). New Delhi : S.Chand & Company Ltd. (Hindi Medium)
- Todaro, M.P. & Smith, S.C. (2012). Economic Development (11th Edition). Boston :Addision - Wesley
- Thirlwal,A.P. (2006). Growth & Development (8th Edition). Palgrave Macmillan. Hampsnire
- Taneja, M.L. & Myer, R.M. (2014). Economics of Development & Planning (2nd Edition). Jalandhar. Vishal Publishing Co. (Hindi Medium)

इकाई – 2

इकाई की रूपरेखा

2-0 परिचय

2.1 इकाई के उद्देश्य

2.2 व्यापार विकास के इन्जन के रूप में

2.3 द्वि– अन्तराल मॉडल

2.4 प्रेबिश, सिंगर और मिर्डल के व्यापार सम्बन्धित सिद्धान्त

2.5 व्यापार से लाभ और अल्पविकसित देश

2.6 प्रत्यक्ष विदेशी निवेश

2.7 बहु राष्ट्रीय निगम

2.8 सारांश

2.9 मुख्य शब्दावली

2.10 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

2.11 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

2.12 अभ्यास हेतु प्रश्न

2.13 आप ये भी पढ सकते है।

2.0 परिचय

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संसार में हजारो सालों से होने लग रहा है। भारत का व्यापार भी संसार के सभी बडे देशों के साथ हजारों साल से था परन्तु आधुनिक काल में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बडी तेजी से बढा है। 1776 में अर्थशास्त्र के पिता एडम स्मिथ ने भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में जोर दिया है। उनके अनुसार व्यापार होने में श्रम का विशिष्टीकरण बढता है। श्रम की विशिष्टीकरण होने से श्रम की उत्पादकता तथा देश का कुल उत्पादन बढता है। इसी तरह से व्यापार के समर्थन में बहुत सारे अर्थशास्त्री अपना पक्ष रखते है लेकिन 1950 के दशक और उसके बाद प्रेबिश, सिंगर और मिर्डल ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के दोष भी बताने शुरू कर दिए थे। इसलिए इस इकाई में हम अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश के लाभ और हानियों पर चर्चा करेगें। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से कुछ हानिया भी होती है और कुछ लाभ भी होते है परन्तु प्रेबिश, सिंगर, मिर्डल ने व्यापार से हानियों पर ज्यादा प्रकाश डाला है, बजाये की लाभ के ।

2.1 इकाई के उद्देश्य

इन इकाई के निम्नलिखित उद्देश्य है।

1 अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लाभों का अध्ययन करना।
2 अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की हानियों का अध्ययन करना।

3 प्रेबिश, सिंगर, मिर्डल के व्यापार के सिद्धान्तों का अध्ययन करना।
4 प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लाभ व हानियों का अध्ययन करना।
5 बहुराष्ट्रीय निगमों का अध्ययन करना।

2.2 व्यापार विकास के इन्जन के रूप में

विदेशी व्यापार का एक देश के आर्थिक विकास में अत्यन्त महत्व है। क्लासीकल तथा नवक्लासीकल दोनों ने ही विदेशी व्यापार को आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण बताया है। इन्होनें विदेशी व्यापार को आर्थिक विकास का इंजन माना है। अल्प विकसित देशों के लिए व्यापार का होना अति आवश्यक है। दूसरी तरफ देखा जाए तो कई अर्थशास्त्रीयों प्रो0 मिन्ट, राऊल प्रेविश तथा मिर्डल ने विकास के लिए विदेशी व्यापार को अवरोध के रूप में बताया है। इनके द्वारा बताया गया है कि विदेशी व्यापार के द्वारा असमानताएं उत्पन्न हो जाती है। जिसके कारण जो देश अमीर है वो और भी ज्यादा अमीर हो गए तथा जो गरीब थे वो और भी ज्यादा गरीब हो गए। प्रो0 मिर्डल द्वारा बताया गया है कि अल्पविकसित देशों के आर्थिक विकास के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बाधाएं उत्पन्न कर देते है। ऐसा मुख्य रूप से 2 कारणों से होता है। पहला है कि इन देशों की परिस्थितियों के कारण अति निर्यात प्रभाव उसके प्रसरण प्रभाव से अधिक शक्तिशाली होता है। दूसरा है कि जो अल्पविकसित देश होते है उनमें दिर्घकाल तक भुगतान संतुलन उनके विपक्ष में होते है।

अब एक मुख्य प्रश्न यह है कि किसी देश के आर्थिक विकास के लिए विदेशी व्यापार सकरात्मक है या नकरात्मक। इस प्रकार की जानकारी प्राप्त करने के लिए हमें दोनों का तुलनात्मक विश्लेषण करना चाहिए।

विदेश व्यापार आर्थिक विकास के इंजन के रूप में

विदेशी व्यापार द्वारा आर्थिक विकास उत्पन्न होने की सोच रखी जाती हे। प्रो0 हैबरलर द्वारा माना गया है कि विदेशी व्यापार द्वारा दो प्रकार के लाभ प्राप्त हो सकते है। जिनको हम प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लाभ कह सकते है।

विदेशी व्यापार के प्रत्यक्ष लाभ

1. आन्तरिक तथा बाहरी बचते

विदेशी व्यापार द्वारा बाजार का विस्तार अत्यधिक मात्रा में होता है और बाजार का विस्तार होने के कारण आन्तरिक तथा बाहरी बचते प्राप्त होती हे। ऐसा होने पर उत्पादन की लागते काफी मात्रा में घट जाती है।

2. निर्वाह क्षेत्र का रूपान्तरण

कृषि उपज के लिए विदेशी व्यापार द्वारा काफी बडी मात्रा में बाजार उपलब्ध कराया जाता है। ऐसा होने पर निर्वाह क्षेत्र मौदिकृत क्षेत्र में तब्दील हो जाता है। इस प्रकार की प्रक्रिया होने पर कृषि क्षेत्र की आय में वृद्धि होने लगती है तथा जीवन – स्तर ऊंचा होने लगता है।

3. बाजार के आकार का व्यापक रूप

अल्पविकसित देशों के विकास के लिए बाजार के आकार का व्यापक रूप होना चाहिए। अल्पविकसित देशो में बाजार का आकार बहुत ही छोटा होता है और इसके द्वारा उत्पादन की मात्रा को खपाया नही जाता। ऐसा होने के कारण इनमें निवेश भी बहुत कम मात्रा में होता है। इस प्रकार की प्रक्रिया होने का मुख्य कारण है कि इन देशों में प्रति व्यक्ति आय बहुत ही कम होती है तथा प्रति व्यक्ति आय कम होने पर लोगों की क्रय – शक्ति भी बहुत कम होती है। अर्थव्यवस्था पर प्रावैगिक प्रभाव डाल जा सकता हे। विदेशी व्यापार बाजार के आकार का विस्तार करके विदेशी व्यापार होने से श्रम – विभाजन हो जाता है तथा मशीनों का प्रयोग बढने लगता है जिसके कारण काफी मात्रा में उत्पादन क्षमता बढ जाती है।

4. उत्पादन की घटती लागते

विशिष्टीकरण के सिद्धान्त पर विदेशी व्यापार निर्भर करता है। विशिष्टीकरण के कारण उत्पादन की लागते घट जाती है। लागते घटने के कारण एक लम्बी प्रक्रिया बन जाती है। लागते कम होने के कारण निर्यात – व्यापार की मात्रा में वृद्धि होती है। ऐसा होने के कारण लाभ बढ जाते है और फिर राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो जाती है। राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने पर उत्पादन के स्तर में भी वृद्धि हो जाती है और विकास की गति बढने लगती है। अतः कहा जा सकता है कि विदेशी व्यापार द्वारा निर्धनता को दूर किया जा सकता है और आर्थिक विकास को बल मिलता है।

5. उत्पादन के साधनों का सही ढंग से प्रयोग

विदेशी व्यापार के द्वारा उत्पादन के साधनों का सही ढंग से प्रयोग किया जाता है। वर्तमान में जो भी साधन है उनका सर्वोतम तरीके से प्रयोग किया जाता है और प्रदत 'उत्पादन फलनो' के साथ साधनों का विज्ञापन अधिक दक्ष होने लगता है। प्रो0 जे0 एस0 मिल ने विदेशी व्यापार को एक सीधा लाभ माना है।

6. तकनीक का काफी मात्रा में विकास

हम कई प्रकार की वस्तुओ का विदशों से आयात – निर्यात करते है। अपने देश के निर्यातों को बढाने के लिए कई प्रकार की तकनीकों का आविष्कार भी किया जाता है। यदि नई तकनीकों का आविष्कार नही किया जाता है तो हमे काफी मात्रा में दूसरे देशों से आयात भी करनी पडती है। अतः विदेशी व्यापार के कारण तकनीकी विकास भी सम्भव हो पाता है।

7. बडी मात्रा में कर प्राप्ति

विदेशी व्यापार के कारण कई प्रकार की औद्योगिक क्रियाएं होती है जो कि अल्पविकसित देशों के निर्यातों को बढाने में सहायता करती है। विदेशी व्यापार के कारण घरेलू देश द्वारा कई प्रकार के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष कर लगाए जाते है। इन करों के कारण काफी बडी मात्रा में सरकार को कर के रूप में आय की प्राप्ति होती है। सरकार को जो कर के रूप में आय प्राप्त होती है। उसे दोबारा कई प्रकार के आर्थिक तथा सामाजिक कार्य किए जाते है।

8. घाटे की भुगतान सन्तुलन की समस्या को ठीक करना

अल्पविकसित देशों की घाटे की भुगतान संतुलन की समस्या अत्यन्त गहन होती है। अल्पविकसित देशों द्वारा अत्यधिक मात्रा में दूसरों देशों से वस्तु तथा सेवाओं का निर्यात करना पडता है जिस कारण उन अविकसित देशों को घाटे की भुगतान संतुलन की समस्या का सामना करना पडता है।

9. विकास की वस्तुओं का आयात

विदेशी व्यापार के द्वारा दूसरे देशों से कई प्रकार के आयात किए जाते है जैसे कच्चा माल, मशीनरी, अर्ध – निर्मित वस्तुएं आदि। इन सब के आयात से अल्पविकसित देशों में औद्योगिकरण का रूप धारण किया जा सकता है और एक बढती हुई विकास की गति को प्राप्त किया जा सकता है।

10. पूंजी निर्माण में वृद्धि

विकासशील देशों में विकास इसलिए भी नही हो पाता क्योंकि उनके पास पूंजी की कमी होती है। व्यापार के द्वारा कई प्रकार की निर्यात प्राप्ति होती है तथा कई प्रकार के प्रत्यक्ष विदेशी व्यापार तथा पोर्टफोलिया निवेश आदि भी। अतः व्यापार द्वारा विकासशील देशों की काफी बडी मात्रा में विकास दर को बढाया जा सकता है।

11. अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार द्वारा आपसी निर्भरता भी बढती है दोनों ही विकसित तथा अल्पविकसित देशों में दोनो बिल्कुल ही निर्भर हो जाते है एक – दूसरे पर। दोनो एक – दूसरे की आर्थिक, राजनैतिक तथा रणनीति में भी हिस्सा लेने लगते है।

2.3 द्वि – अन्तराल मॉडल

आर्थिक विकास की दोहरे अन्तराल की व्याख्या चेनरी तथा अन्य अर्थशास्त्रियों द्वारा की गई है। दोहरे अन्तर्राल से अभिप्राय है कि अल्पविकसित देशों में वृद्धि – दर का जो लक्ष्य होता है उसको प्राप्त करने के लिए भिन्न – भिन्न तथा स्वतंत्र अवरोधक बचत अन्तराल तथा विदेशी विनिमय है। विदेशी सहायता को इन दोनो अन्तरालों की पूर्ति को अर्थव्यवस्था की वृद्धि – दर के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए चेनरी ने आवश्यक समझा है। अन्तरालों के आकारों की संगणना करने के लिए एक दिए हुए पूंजी उत्पादन अनुपात के साथ अर्थव्यवस्था की एक लक्ष्य वृद्धि – दर की परिकल्पना की गई है। जब लक्ष्य प्राप्त करना हो तो यदि निवेश घरेलू बचत दर से कम होती है तो बचत अन्तराल पैदा हो जाता है। बहुत से विकासशील देश ऐसे होते है कि उन्हें विदेशी वित्त की आवश्यकता अपनी घरेलू बचत को पूरा करने के लिए करनी पडती है। किसी देश की अर्थव्यवस्था में भारी असंतुलन भीतरी असंतुलन द्वारा उत्पन्न हो जाता है। यह विदेशी विनिमय अंतर कहलाता है। जो विदेशी वित्त की आवश्यकता होती है वह इस अन्तर को भरने के लिए होती है।

कई बार भुगतान शेष के रूप में भारी असंतुलन पैदा हो जाता है यदि किसी अर्थव्यवस्था में कोई भीतरी असन्तुलन अर्थात कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय खर्चे और राष्ट्रीय बचत में अन्तर है।

राष्ट्रीय आय का विश्लेषण किया जाये तो (C+I+G+X-M) और (C+S+T) आपस में बिल्कुल ही बराबर होने चाहिए अर्थात कहा जा सकता है कि

$C+I+G+X-M = C+S+T$

C = उपभोग

I = सकल निवेश

G = सरकारी खर्चे

X = निर्यात

M = आयात

T = कर

इसको अन्य प्रकार से भी लिखा जा सकता है

$I+G-S-T = M-X$

or

$(I+G) – (S+T) = M-X$

इस समीकरण द्वारा स्पष्ट किया गया है कि अर्थव्यवस्था में संसाधन अंतर भी पैदा हो सकता है और जिसके कारण विदेशी विनिमय अन्तर पैदा होता है। विदेशी वित्त की आवश्यकता पडती है ताकि इस अन्तर को पूरा किया जा सके। ऊपर जिन दो अन्तरों की व्याख्या की गई है उनके द्वारा अल्पविकसित देशों में वृद्धि दर का जो लक्ष्य होता है उसको प्रभावित किया जाता है।

द्वि – अन्तराल मॉडल की मान्यताएं

1 मुख्य मान्यता यह है कि बचत और विदेशी विनिमय एक – दूसरे के विकल्प के रूप में नही हो सकते।

2 एक देश में निर्यात में सम्भावित बचत को नही बदला जा सकता।

3 निर्यात प्रोत्साहन और आयात प्रतिस्थापन की नीतियों को लागू नही किया जा सकता।

4 इस मॉडल में कई प्रकार की संरचनात्मक कठोरताएं भी पाई जाती है।

द्वि – अन्तराल मॉडल की चित्र द्वारा व्याख्यां

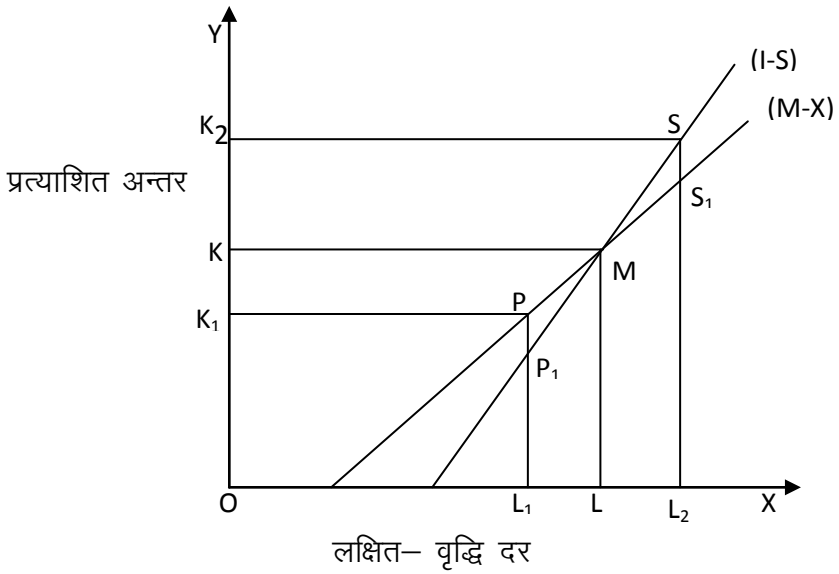

चित्र 2.1

चित्र 2.1 में X – अक्ष पर लक्षित वृद्धि दर तथा OY – अक्ष पर प्रत्याशित अंतर को दर्शाया गया है। चित्र में (I-S) द्वारा बचत अन्तर को दर्शाया गया है तथा (M-X) द्वारा विदेशी विनिमय अन्तर को दर्शाया गया है। चित्र में M बिन्दू पर दोनों आपस में बराबर है अर्थात संतुलन है इस अवस्था में M बिन्दू पर लक्षित वृद्धि दर OL है जिसको OK विदेशी सहायता प्रवाह से प्राप्त किया गया है यदि लक्षित वृद्धि दर OL_1 है तो यहां पर बचत अन्तर से विदेशी पूंजी अन्तर अधिक मात्रा में है जिसको PP_1 से दिखाया गया है। इस अन्तर को विदेशी सहायता के बिना पूरा नही किया जा सकता। यह विदेशी मुद्रा अन्तर OK_1 है। इसी तरह दूसरी स्थिति का जानने से पता चलता है कि लक्षित वृद्धि दर OL_2 है यहां पर बचत अन्तर विदेशी मुद्रा अन्तर से अधिक है। यह बचत अन्तर OF_2 है जिसको अधिक मात्रा में विदेशाी पूंजी की आवश्यकता होती है।

द्वि – अन्तराल मॉडल की कमिया

1 इस माडल की मुख्य कमी यह बताई गई है कि यह मॉडल संदेहपूर्ण मान्यताओं पर आधाारित है। जिसे साधरणतया लागू नही किया जा सकता है।
2 इस माडल द्वारा विदेशी सहायता का सही तरीके से पता नही लगाया जा सकता।
3 इन दो अन्तरों के अलावा, अल्पविकसित देशों को कई अन्य महत्वपूर्ण अन्तरों का सामना करना पडता है जो प्रायः तकनीकी क्षेत्र और आर्थिक ढांचे में होते है।
4 इस मॉडल में जो तत्व शामिल है उनके मूल्य भविष्य में स्थिर रहते है।

2.4 प्रेबिश, सिंगर और मिर्डल के व्यापार सम्बन्धित सिद्धान्त

व्यापार की शर्तो के सम्बन्ध में अत्यधिक मात्रा में अनुभव सिद्ध प्रमाण प्राप्त हुए है जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि व्यापार की शर्ते लगातार ही विकासशील देशों के विरूद्ध रही है। रोल प्रेबिश द्वारा माना गया है कि व्यापार की शर्ते का जो झुकाव होता है वो प्राथमिक वस्तुओं के पक्ष में नही होता बल्कि विनिर्मित वस्तुओं तथा पूंजी वस्तुओं के पक्ष में रहा है। रोल प्रेबिश द्वारा जो दर्शाया गया है एच0 डब्ल्यू सिंगर द्वारा उसको माना गया है।

प्रेबिश सिंगर द्वारा माना गया है कि यदि एक अल्पविकसित देश को किसी विकसित देश से कुछ औद्योगिक दृष्टि से सम्बन्धित वस्तुओं का आयात करना है तो अल्पविकसित देश को काफी बडी मात्रा में अपनी प्राथमिक वस्तुओं का निर्यात करना पडता है। व्यापार की शर्तो का ह्रास एक अल्पविकसित देश के विकास में अत्यन्त बडी मात्रा में रूकावट डालता है। प्रेबिस और सिंगर ने माना है कि जो विकसित देश अपनी तकनीकी प्रगति करते है उनका लाभ अल्पविकसित देशों को नही मिल पाता है। जिन औद्योगिक वस्तुओं का उत्पादन औद्योगिक देशों द्वारा किया जाता है उन देशों का उन सभी वस्तुओं पर एकाधिकार नियंत्रण हो जाता है। वे विनिर्मित वस्तुओं की कीमतों में अपने पक्ष में तथा कम विकसित देशों के हितों के विरूद्ध परिवर्तन कर सके। अतः कहा जा सकता है कि विकासशील देशों के व्यापार की शर्ते विरूद्ध ही रहती है।

सिद्धान्त की मुख्य मान्यताएं

प्रेविश सिंगर सिद्वान्त की मुख्य मान्यताएं इस प्रकार है

1 प्राथमिक उत्पादों की मांग में विकासशील देशों में बहुत ही कम वृद्धि होती है।
2 विकासशील देशों में मजदूरी और कीमतें भी बहुत कम होती है।
3 विकसित देश अपने द्वारा तैयार पदार्थ पर एकाधिकार नियन्त्रण रखते है।
4 कम विकसित देशों में आर्थिक वृद्धि आय व्यापार शर्तो से प्रकट होती है।
5 इस मॉडल की एक मुख्य मान्यता यह है कि जो आय में वृद्धि विकसित देशों में होती है तो एंजल्स के नियम के कारण मांग का जो ढंग होता है वह प्राथमिक उत्पादों से विनिर्मित उत्पादों की ओर सरक जाता है।

सिंगर द्वारा यह भी माना गया है कि विकासशील देशों में ऋण की समस्या बढ जाती है जिसके कारण इस समस्या में व्यापार की शर्तो के दीर्घकालीन ह्रास में दो तरह से मोड दिया है। पहला, निर्यात से जो भी प्राप्ति होती है उसका अत्यधिक मात्रा में अनुपात आयात के लिए उपलब्ध नही है। दूसरा, विकासशील देशों पर IMF – प्रेरित समंजन नीतियों के कारण भारी ऋणों का भुगतान करने के लिए निर्यातों को बढाने का अधिक दवाब है।

व्यापार की शर्तो के दीर्घकालीन ह्रास के कारण

1. सन्तापकारी वृद्धि

जगदीश भगवती द्वारा माना गया है कि सन्तापकारी वृद्धि की प्रक्रिया के कारण विकासशील देशों की अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार शर्तो का ह्रास हो सकता है। इसके कारण विकासशील देशों का विकसित देशो द्वारा काफी बडी मात्रा में शोषण किया जाता है। अतः कहा जा सकता है कि संतापकारी वृद्धि व्यापार की शर्तो के दीर्घकालीन ह्रास का मुख्य कारण है।

2. विकसित देशों की अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

सिंगर द्वारा माना गया है कि जो अल्पविकसित देशों द्वारा अपनी अर्थव्यवस्थाओं को व्यापार के लिए खोला जाता है उसका प्रभाव विकसित देश की अर्थव्यवस्था के लाभ के रूप में होता है। निर्यातों का बडी मात्रा में फैलाव होता है तथा गुणक प्रभाव भी उत्पन्न होता है।

3. उत्पादों में किसी भी प्रकार का सुधार नही

रोल प्रेबिश द्वारा माना गया है कि प्राथमिक वस्तुओं की जो कम कीमते होती है उनका मुख्य कारण यह है कि कोयला, कच्चा लोहा, चावल, चीनी आदि वस्तुओं का जो भी निर्यात किया जाता है उसकी पहले की तुलना में गुणवता में कोई सुधार नही हुआ है।

4. मांग की कम आय – लचक

ऐंजल के नियम द्वारा व्यापार की शर्तो की अल्पविकसित देशों के लिए भी व्याख्या की गई है। अल्पविकसित देशों मे।मुख्य रूप से जो खाद्य फसले होती है उनकी प्रधानता होती है। मांग की आय लचक कम होने के कारण खेती वस्तुओं पर किए गए कुल खर्च का राष्ट्रीय आय में अनुपात विनिर्मित वस्तुओं पर जो भी खर्च किया जाता है उसके अनुपात की तुलना में कम हो जाता है।

5. तकनीकी उन्नति से लाभ

तकनीकी उन्नति के जो लाभ होते है वो सभी जो विकसित देश होते है उनको प्राप्त हो जाते है। क्योंकि वो विकासशील देशों में प्राथमिक वस्तुओं का आयात कर लेते है। अतः तकनीकी उन्नति से प्राप्त लाभों का वितरण ठीक प्रकार से अल्पविकसित देशों को नही मिल पाता है।

6. क्षेत्रिय आर्थिक ग्रुप

इस माडल की एक मुख्य मान्यता यह भी है कि जो विकसित देश होते है उनके द्वारा आपस में क्षेत्रीय आर्थिक ग्रुप बना लिए जाते है और उनके द्वारा आपसी व्यापार को प्रोत्साहन मिलता रहता है। अतः जो विकासशील देश होते है उनके निर्यात में वृद्धि धीमी पड जाती है और उनकी जो व्यापार की शर्ते होती है वो पहले से अधिक मात्रा में बुरी हो जाती है।

7. संरक्षणात्मक नीतियां

जैसे ही कुछ विकासशील देशों द्वारा अपने उद्योगों का विकास शुरू किया गया है, विकसित देशों द्वारा संरक्षणात्मक नीतियां अपना ली गई है। उनके द्वारा जो अल्पविकसित देशों के उत्पाद है उनके विरूद्ध प्रशुल्क बढा दिए गए। अतः कहा जा सकता है कि अल्पविकसित देशों के व्यापार की शर्ते विरूद्ध ही रहती है।

2.5 व्यापार से लाभ और अल्पविकसित देश

व्यापार अल्पविकसित देशों के आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसके द्वारा विकास की लालसा उत्पन्न की जाती है। व्यापार द्वारा एक अल्पविकसित देश को जिन साधनों की आवश्यकता होती है उसे पूरा किया जाता है। प्रो0 हैबरलर द्वारा माना गया है कि 19वीं0 तथा 20वीं0 शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अल्पविकसित देशों के विकास के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनके द्वारा यह भी माना गया है कि आने वाले समय में यह योगदान और भी ज्यादा बढता जायेगा। व्यापार से कई प्रकार के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लाभ प्राप्त होते है। क्लासिकी और नवक्लासिकी अर्थशास्त्रियों द्वारा व्यापार को वृद्धि का इंजन माना गया है। कई अर्थशास्त्रियों द्वारा इसकी आलोचना के आधार पर यह भी माना गया कि व्यापार द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय असमानता उत्पन्न हो जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय असमानता के कारण अमीर और भी ज्यादा अमीर तथा गरीब और भी ज्यादा गरीब होने लगते है।

व्यापार से होने वाले कुछ लाभ इस प्रकार है

1. **उत्पादन में विशिष्टीकरण**
   अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तथा श्रम – विभाजन के कारण कई देशों द्वारा उत्पादन में विशिष्टीकरण कर लिया जाता है जो कि अल्पविकसित देशों के लिए अति – आवश्यक होता है आर्थिक विकास के लिए। परन्तु फिर भी अल्पविकसित देशों में विकास के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार द्वारा बाधा डाली जाती है और उनका विकास रूक जाता है।

2. पूंजी निर्माण पर प्रतिकूल प्रभाव

अल्पविकसित देशों में पूंजी निर्माण पर विदेशाी व्यापार के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनकारी प्रभाव का प्रतिकूल प्रभाव पडता है। अतः व्यापार अल्पविकसित देशों के हित में कार्य नही करता।

3. प्रबल अतिनिर्यात प्रभाव

मिर्डल द्वारा माना गया है कि अल्पविकसित देशों पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रबल अतिनिर्यात प्रभाव भी पड सकते है। उनके द्वारा कहा गया है कि व्यापार के धनी देशों पर अनुकूल तथा गरीब देशों पर प्रतिकूल प्रभाव पडते है। यदि औद्योगिक देश तथा अल्पविकसित देश दोनों में किसी भी प्रकार का बिना रोक – टोक के व्यापार होता है तो उस व्यापार का औद्योगिक देश को फायदा तथा गरीब देश को नुकसान उठाना पडेगा। धनी देशों मे।प्रबल प्रसरण प्रभावों वाले निर्माण उद्योगों का विस्तृत आधार होता है। अल्पविकसित देशों में निर्यात सस्ती दरों पर किया जाता है औद्योगिक देशों द्वारा। अल्पविकसित देशों के लघू उद्योगों तथा दस्तकारी को परे धकेल दिया है। अतः यह कहा जा सकता है कि जो अल्पविकसित देश होते है वे केवल प्राथमिक वस्तुओं के उत्पादक बनकर रह जाते है। क्योंकि जो प्राथमिक वस्तुएं होती है उनकी मांग लोभ रहित होती है निर्यात बाजार में। इसी कारण उनकी कीमतों में काफी मात्रा में उतार – चढाव भी आते है और इन उतार – चढाव के कारण हानि भी उठानी पडती है।

4. व्यापार की शर्तो में दीर्घकालीन ह्रास

प्रेबिश द्वारा माना गया है कि अल्पविकसित देशों की व्यापार – शर्तो में दीर्घकालीन ह्रास हुआ है। उनकी धारणा यह रही है कि पिछले काफी वर्षो में अल्पविकसित देशों की अपनी आयात क्षमता दुर्बल होने के कई घातक परिणाम भुगतने पडे है और अल्पविकसित देशों की बढती जनसंख्या के भरण – पोषण के लिए प्राथमिक – उत्पादन उद्योगों की क्षमता दुर्बल पड गई है। व्यापार की शर्तो में दीर्घकालीन – ह्रास के कारण भुगतान – शेष का असंतुलन पैदा हो जाता है तथा बेकारी उत्पन्न हो जाती है। अतः इसके द्वारा पूंजी – निर्माण की दर भी घट जाती है और आर्थिक – वृद्धि की दर भी घट जाती है। अतः कहा जा सकता है कि विकसित देशों को अधिक मात्रा में लाभ प्राप्त होते है जबकि लागत अल्पविकसित देशों की अधिक मात्रा में आती है। अल्पविकसित देशों की व्यापार शर्तो के दीर्घकालीन ह्रास का अर्थ है कि आय का अन्तर्राष्ट्रीय हस्तान्तरण अमीर देशों से गरीब देशों की तरफ होता है। इसी कारण अल्पविकसित देशों की वास्तविक आय का स्तर तथा विकास की क्षमता घट जाती है।

2.6 प्रत्यक्ष विदेशी निवेश

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से अभिप्राय है कि यह वह निवेश है जिसमें न केवल विदेशियों द्वारा परिसम्पतियों का स्वामित्व रखा जाता है बल्कि जो सहायता प्राप्त करने वाले देश होते है उनके द्वारा आय प्रभाव को पैदा करने वाली क्रियाओं पर नियन्त्रण रखा जाता है। इसमें दोनों प्रकार के अन्तरंण शामिल होते है जिनमें पूंजी का अन्तरंण और प्रबन्धन तथा तकनीकी ज्ञान का अन्तरंण वर्तमान समय में अन्तर्राष्ट्रीय निजी पूंजी प्रवाहों का मुख्य स्त्रोत प्रत्यक्ष निवेश को माना जाता है।

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के पक्ष में तर्क

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के पक्ष में मुख्य तर्क इस प्रकार है।

1 तकनीकी प्राप्ति

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश द्वारा न केवल दुर्लभ साधनों को काम में लाया जाता है बल्कि उनके द्वारा काफी बडी मात्रा में विकसित तकनीकी ज्ञान की प्राप्ति होती है। विकसित निपूणता तथा नई – नई तकनीके आती है। इनके द्वारा आर्थिक रूपान्तरण की गति में तेजी से वृद्धि आती है।

2 लाभों की प्राप्ति का दोबारा निवेश

विदेशी निवेशकों द्वारा जो लाभ प्राप्त किए जाते है उनका एक भाग फिर से निवेश करने के लिए लगा दिया जाता है और इस प्रकार का निवेश करने से पूंजी निर्माण की प्राप्ति होती है तथा उच्च मात्रा में आर्थिक विकास होता है। अतः कहा जा सकता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश द्वारा लाभों की प्राप्ति का पुनः निवेश करने अर्थव्यवस्था में वृद्धि की जा सकती है।

3 घरेलू उद्योग का विकास

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश द्वारा काफी बडी मात्रा में घरेलू उद्योग का विकास होता है। विदेशी निवेशकों द्वारा जो घरेलू उत्पादक होते है उनको सहायक इकाईया स्थापित करने का अवसर दिया जाता है। विदेशी निवेशकों द्वारा उनकों कुछ मात्रा में वित्तीय सहायता भी दी जाती है। अतः कहा जा सकता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश द्वारा घरेलू उद्योगों का काफी बडी मात्रा में विकास होता है।

4 सामाजिक प्रतिफल में वृद्धि

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के द्वारा मूल्य वृद्धि प्राय विदेशी निवेशों पर प्रतिफल से अधिक होती है। अतः कहा जा सकता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश द्वारा सामाजिक प्रतिफल अत्यधिक मात्रा में प्राप्त होता है जबकि निजी प्रतिफल नही।

5 कर – आय की प्राप्ति

विदेशी निवेशको की क्रियाओं के द्वारा जो अल्पविकसित देश होते है उनको काफी बडी मात्रा में लाभ प्राप्त होते है। उन लाभों तथा निर्यातों पर सरकार द्वारा काफी मात्रा में कर लगाये जाते है जिसके कारण सरकार को कर राजस्व की प्राप्ति होती है। इस राजस्व प्राप्ति को कई प्रकार के सामाजिक तथा आर्थिक कार्यो में लगाया जा सकता हैं।

6 जोखिम उठाने में समर्थ

जो विकासशील देश होते है वो जोखिम उठाने में असमर्थ होते है। इस कारण उनके द्वारा निवेश क्रिया का आरम्भ नही किया जाता। जो विदेशी निवेशक होते है वो जोखिम उठाने में समर्थ होते है और उनके द्वारा निवेश क्रिया में काफी मात्रा में रूचि ली जाती है। विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों के औद्योगिकरण के लिए काफी बडी मात्रा में योगदान किया जाता है।

7 बचत और विदेशी विनिमय अन्तरालों को भरना

विकासशील देशों में विकास प्रक्रिया लगभग रूकी रहती है। विकासशील देशों में कई प्रकार के अन्तराल आ जाते है। इन अन्तरालों के कारण बचत और उत्पादन नियोजित दरों के लक्ष्यों को प्राप्त नही किया जा सकता। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश द्वारा अल्पविकसित देशों में बचत और विदेशी विनिमय अन्तरालों को भरता है और लगातार विकास पर ध्यान दिया जाता है।

8 बडी मात्रा में बाजार का विस्तार

अल्पविकसित देशों में विकास की प्रक्रिया बाजार का छोटा रूप रूकावट का कारण बन जाता है। जो विदेशी निवेशक होते है उनके द्वारा घरेलू देश में उत्पादों की ब्रिकी करने के लिए अधिक मात्रा में बेचने का प्रयास किया जाता है और इसके बाजार का पूरी तरह शोषण किया जाता है।

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के विपक्ष में तर्क

1 असंतुलित विकास

जो अल्पविकसित देश है उनका यह अनुभव रहा है कि जो विदेशी निवेशक होते है उनके द्वारा ऐसे देश में उद्योग स्थापित किए जाते है जिस देश से उन्हे कच्चा माल आदि उचित मात्रा में मिल सके। जो पूंजी वस्तु

उद्योग वाले देश होते है उनमें प्रत्यक्ष विदेशी निवेश कम ही हो पाता है। इस कारण प्रत्यक्ष विदेशी निवेश द्वारा बहुत ही कम मात्रा में तथा अंसतुलित विकास हो पाता है।

2 स्वदेशी मजदूरों की निपुणता में कोई वृद्धि नही

यह कहा जाता है कि विदेशी प्रत्यक्ष निवेश द्वारा काफी बडी मात्रा में मजदूरों को तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त होता है। विदेशी उद्योगों द्वारा किसी भी प्रकार की सुविधाएं या प्रशिक्षण स्वदेशी श्रम को नही दिया जाता है। उद्योगों में जो बडे पद पर होते है वो सभी विदेशी निवेश करने वाले देश से ही होते है। अतः कहा जा सकता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के कारण किसी भी प्रकार की स्वदेशी मजदूरों की निपूणता में कोई वृद्धि नही होती।

3 रोजगार में कोई वृद्धि नही

अल्पविकसित देशों द्वारा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को इसलिए अपने देश में प्रोजेक्ट लगाने की अनुमति दी जाती है ताकि अल्पविकसित देश में जो श्रम बेकार पडा हुआ है उसे काम के अवसर प्राप्त हो तथा देश से बेरोजगारी में कमी हो, परन्तु विदेशी प्रत्यक्ष निवेशक देश द्वारा ऐसी तकनीकों का प्रयोग किया जाता है जिसके कारण रोजगार में किसी भी प्रकार की कोई वृद्धि नही होती है। कई बार उनके द्वारा स्वंय के देश से श्रम का आयात कर लिया जाता है। UNCTAD के द्वारा माना गया है कि विदेशी प्रत्यक्ष निवेशक का अल्पविकसित देशों में रोजगार का ऋणात्मक प्रभाव पडता है।

4 एकाधिकारों का उदय

जो उद्योग विदेशी निवेशकों द्वारा स्थापित किए जाते है वो स्वदेशी प्रतियोगियों को बाजार से बाहर निकाल देते है। उनके द्वारा उत्पादों और प्रक्रियाओं के बारे में पेटैंट अधिकार भी प्राप्त कर लिए जाते है। धीरे – धीरे घरेलू देश का शोषण होने लगता है और एकाधिकार विदेशी निवेश वाले देश के हाथ में आ जाता है।

5 अधिक मात्रा में लागत

घरेलू देश द्वारा विदेश निवेश वाले देश को निवेश करने देने के लिए कई प्रकार की अन्य सुविधाएं भी देनी पडती है जैसे – पानी, बिजली, परिवहन, संचार आदि और इन सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए घरेलू देश को काफी मात्रा में लागत उठानी पडती है और कुछ समय के लिए उन्हें कर से भी छुट्टी देनी पडती है। अतः कहा जा सकता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का अपने घरेलू देश होने के कारण घरेलू देश को काफी बडी मात्रा में लागत उठानी पडती है।

6 उद्योगों का केन्द्रीयकरण

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से उद्योगों के खनिज प्रधान क्षेत्रों और जो जनसंख्या के बडे केन्द्र होते है उन पर केन्द्रीयकरण का झुकाव होता है। औद्योगिक क्रियाए काफी बडी मात्रा में होती है उन सभी क्षेत्रों में। इसलिए कहा जा सकता है कि काफी बडा क्षेत्र औद्योगिक पिछडापन का रह जाता है जबकि केन्द्रीयकरण केवल कुछ चुने हुए क्षेत्रों में रहता है।

7 लाभों से प्रेरित

जो विदेशी निवेशक होते है वो केवल अपने लाभ के लिए कार्य करते है। इसी कारण से उन्हें स्वार्थी मित्र भी कहा जाता है। इस प्रकार के विदेशी निवेश के कारण काफी बडी मात्रा में अनिश्चितता आ जाती है। अतः कहा जा सकता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के द्वारा लाभों की प्राप्ति केवल विदेशी निवेशक को ही होती है घरेलू देश को नही।

2.7 बहु राष्ट्रीय निगम

बहुराष्ट्रीय निगमों (MNC'S) का विस्तार प्रत्यक्ष निवेशों के साधन के रूप में हुआ है। यह युद्ध के बाद एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना है। बहुराष्ट्रीय निगम को एक अन्य नाम से भी जाना जाता है। जिसे ट्रांसनैशनल निगम (TNC'S) भी कहा जाता है। बहुराष्ट्रीय निगम की जो आर्थिक परिभाषा दी जा सकती है।वह निवेश के आकार, मात्रा तथा

भौगोलिक विस्तार के रूप में दी जा सकती है। भौगोलिक दृष्टि से यदि देखा जाए तो यह केवल अपनी ही राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नही रहता यह दो या दो से अधिक देशों में फैली हुई होती है। जे0 डनिंग द्वारा माना गया है कि यह एक ऐसा उद्यम है जिसके द्वारा जो आय पैदा करने वाली परिसम्पतियां होती है उनका एक से अधिक देशों में स्वामित्व और नियन्त्रण रखा जाता है।

बहुराष्ट्रीय निगम की मान्यताएं

1 इनके द्वारा बडे पैमाने पर कार्य किए जाते है।
2 बहुराष्ट्रीय निगम की जो ब्रिकी होती है वो सभी डालरों में होती है।
3 बहुराष्ट्रीय निगम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काम करती है।
4 उनका मुख्य कार्यालय उत्पति वाले देश में होता है।
5 उनका ढांचा अल्पाधिकारिक होता है।
6 उनके द्वारा स्थानान्तरण का कार्य भी किया जाता है।

बहुराष्ट्रीय निगम की भूमिका

विश्व अर्थव्यवस्था में बहुराष्ट्रीय कम्पनी बहुत ही शक्तिशाली बन गई है। उनके द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर क्रांतिकारी प्रभाव डाले गए है। बहुराष्ट्रीय निगम की मुख्य भुमिका इस प्रकार है।

1 रोजगार में बढोतरी

बहुराष्ट्रीय निगमों की जो बढती हुई क्रियाएं होती है उनके द्वारा औद्योगिक और व्यवसायिक क्षेत्रों मे।काम के अवसर काफी मात्रा में बढ जाते है। अल्पविकसित देशों में उपलब्ध जनसाधनों का अधिक प्रयोग होता है। अतः कहा जा सकता है कि बहु राष्ट्रीय निगम द्वारा काफी मात्रा में रोजगार के अवसर में बढोतरी होती है।

2 भुगतान शेष पर प्रभाव

बहुराष्ट्रीय निगमों द्वारा अल्पविकसित देशों में अपने उद्योग स्थापित किए जाते है जो न केवल घरेलू देश की आवश्यकता को पूरा करने के लिए किए जाते है बल्कि उनके द्वारा उन वस्तुओं तथा सेवाओं का निर्यात भी किया जाता है। विकासशील देशों मे विदेशी विनिमय की बडी राशियों को कमाने से भुगतान शेष की स्थिति का काफी मात्रा में अनुकूल प्रभाव पडता है।

3 पूंजी का हंस्तान्तरण

अल्पविकसित देशों में काफी मात्रा में पूंजी की कमी पाई जाती है।इन देशों के पास घरेलू बचतें काफी कम मात्रा में होती है। बहुराष्ट्रीय निगमों के पास काफी मात्रा में पूंजी होती है। उनके द्वारा जोखिमों को भी सहन कर लिया जाता है। अतः विदेशी निवेशक देशों द्वारा पूंजी का हंस्तान्तरण किया जाता है। यह हंस्तान्तरण पूंजी अधिकता वाले देश से पूंजी अभाव वाले देश में होता है।

4 बाजारों का विकास

अल्पविकसित देशों में बाजारों का आकार बहुत ही छोटा होता हैं जिस कारण विकास प्रक्रिया रूक जाती है। बहुराष्ट्रीय निगमों द्वारा काफी मात्रा में प्रचार – प्रसार किया जाता है और विश्व व्यापी ढांचे के द्वारा कम विकसित देशों में तैयार उत्पादो के लिए विशेष रूप से बाजार का विकास हो जाता है।

5 जोखिम उठाना

जो अल्पविकसित देश होते है उनके लिए विकास प्रक्रिया के शुरूआती दौर में काफी मात्रा में जोखिम की निश्चितता पाई जाती है बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा विकासशील देशों की इस मुख्य बाधा को हटाया जा सकता है क्योंकि बहुराष्ट्रीय कम्पनियां आसानी से सभी प्रकार के जोखिमों को उठा लेती है।

6 प्राकृतिक साधनों का पूर्ण प्रयोग

प्राकृतिक संसाधनों की विकासशील देशों में काफी मात्रा में बहुलता पाई जाती है। विकासशील देशों द्वारा इनका उचित प्रकार से प्रयोग नही किया जाता लेकिन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा इन देशों के प्राकृतिक साधनों का सही मात्रा में पूर्ण प्रयोग किया जाता है।

2.8 सारांश

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के किसी देश पर दोनों प्रभाव धनात्मक ऋणात्मक पडते है। व्यापार को आर्थिक विकास का इन्जन भी माना जाता है। परन्तु पिछले कुछ सालों से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार अल्पविकसित देशों के प्रतिकूल चल रहा है। इसमें से सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि अल्पविकसित देश ज्यादातर प्राथमिक वस्तुओं जैसे कृषि उत्पादों का निर्यात करते है। कृषि उत्पादों का निर्यात करने से अल्पविकसित देशों को नुकसान उठाना पडता है। क्योंकि कृषि उत्पादों की मांग बेलोचदार होती है। इसलिए इनकी पूर्ति बढाने पर इनकी कीमते घट जाती है और कीमत घटने से उनकी आगम भी घट जाती है। जबकि औद्योगिक वस्तुओं तथा सेवा क्षेत्र की वस्तुओं की मांग लोचदार होती है। इसलिए ये चीजे कुल आय को बढा देती हे। यह निष्कर्ष प्रेबिश, सिंगर और मिर्डल जैसे अर्थशास्त्रियों ने बताया है।

2.9 मुख्य शब्दावली

द्वि – अन्तराल मॉडल – दोहरे अन्तराल से अभिप्राय है कि अल्पविकसित देशों में वृद्धि – दर का जो लक्ष्य होता है उसको प्राप्त करने के लिए भिन्न – भिन्न तथा स्वतन्त्र अवरोधक बचत अन्तराल तथा विदेशी विनिमय है।

विदेशी विनिमय अन्तर – जब किसी अथव्यवस्था में जो बाहरी असन्तुलन भीतरी असन्तुलन द्वारा उत्पन्न होता है तो वह विदेशी विनिमय अन्तर कहलाता है।

प्रेबिश, सिंगर मॉडल – इस मॉडल में माना गया है कि व्यापार की शर्तो का जो झुकाव होता है वो प्राथमिक वस्तुओं के पक्ष में नही होता बल्कि विनिर्मित वस्तुओं तथा पूंजी वस्तुओं के पक्ष में रहा है।

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश – यह वह निवेश है जिसमें न केवल विदेशियों द्वारा परिसम्पत्तियों का स्वामित्व रखा जाता है बल्कि जो सहायता प्राप्त करने वाले देश होते है उनके द्वारा आय प्रवाहों को पैदा करने वाली क्रियाओं पर नियन्त्रण रखा जाता है।

2.10 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

1 द्वि अन्तराल माडल की व्याख्या ..... की गई।
2 अल्पविकसित देशों की व्यापार – शर्तो में दीर्घकालीन ह्रास ..... द्वारा माना गया।
3 बहुराष्ट्रीय निगम का मुख्यालय ..... देशों में होता है।
4 बहुराष्ट्रीय निगम ..... के माध्यम से अल्पविकसित देशों को अधिक तथा सस्ती पूंजी उपलब्ध कराते है।
5 अन्तर्राष्ट्रीय निजी पूंजी प्रवाहों का मुख्य स्त्रोत ..... को माना जाता है।
6 ..... के अन्तर्प्रवाह द्वारा बचत प्रतिबन्ध तथा विदेशी विनिमय प्रतिबन्ध दोनों को ही पूरा किया जा सकता है।
7 बहुराष्ट्रीय निगम द्वारा ..... पर कार्य किया जाता है।

2.11 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

1 चैनरी
2 प्रैबिश
3 विकसित देशों
4 प्रत्यक्ष निवेश

5 प्रत्यक्ष निवेश
6 विदेशी पूंजी
7 बडे पैमाने

2.12 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1 विदेशी व्यापार के दो मुख्य प्रत्यक्ष लाभ बताइये।
2 विदेशी व्यापार क्या है ?
3 द्वि – अन्तराल माडल क्या है ?
4 व्यापार की शर्तो से क्या अभिप्राय है ?
5 प्रत्यक्ष निवेश से क्या अभिप्राय है ?
6 बहु – राष्ट्रीय निगम क्या है ?
7 विदेशी विनिमय अन्तर क्या है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 व्यापार विकास के इन्जन के रूप में किस प्रकार भूमिका निभाता है विस्तार से व्याख्या करे ?
2 चेनरी के द्वि – अन्तराल माडल की आलोचनात्मक व्याख्या करे ?
3 अल्पविकसित देशो को व्यापार से लाभ किस प्रकार मिलते है ?
4 प्रत्यक्ष विदेशी निवेश क्या है ? प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के पक्ष और विपक्ष में मुख्य तर्क बताइए ?
5 बहु – राष्ट्रीय निगम क्या है ? इसकी भूमिका की विस्तार से व्याख्या करे ?

2.13 आप ये भी पढ़ सकते है एवम् सन्दर्भ सूची

- Ahuja, H.L. (2017). Development Economics (Ist Edition). New Delhi S. Chand & Company Pvt. Ltd.
- Jhingan, M.L. (2004). The Economics of DevelopmentAnd Planning (4 th edition). New Delhi : Vrinda publication Pvt. Ltd. Hindi medium
- Puri, V.K. & Mishra, S.K. (2019). Indian Economy (37th edition). Mumbai : Himalaya Publishing House Pvt. Ltd.
- Mishra, S.K. & Puri, V.K. (2006). Economics of DevelopmentAnd Planning (12th edition). Mumbai : Himalya Publisnig House
- Singh, S.P. (2007). Economic DevelopmentAnd Planing (21st Edition). New Delhi : S.Chand & Company Ltd. (Hindi Medium)
- Todaro, M.P. & Smith, S.C. (2012). Economic Development (11th Edition). Boston :Addision - Wesley
- Thirlwal,A.P. (2006). Growth & Development (8th Edition). Palgrave Macmillan. Hampsnire
- Taneja, M.L. & Myer, R.M. (2014). Economics of Development & Planning (2nd Edition). Jalandhar. Vishal Publishing Co. (Hindi Medium)

इकाई – 3

इकाई की रूपरेखा

3.0 परिचय

3.1 इकाई के उद्देश्य

3.2 मौदिक नीति का आर्थिक विकास में योगदान

3.3 राजकोषीय नीति का आर्थिक विकास में योगदान

3.4 तकनीक का चुनाव

3.4.1 उचित तकनीक

3.5 निवेश की कसौटियां

3.6 लागत लाभ विश्लेषण

3.7 सारांश

3.8 मुख्य शब्दावली

3.9 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

3.10 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

3.11 अभ्यास हेतु प्रश्न

3.12 आप ये भी पढ़ सकते है ?

3.0 परिचय

विकासशील देशों के लिए सरकारी निवेश का बहुत बडा महत्व है। क्योंकि सरकारी निवेश के बिना निजि निवेश को भी नही बढाया जा सकता है परन्तु सरकारी निवेश करने के बाद भी यह आवश्यक नही है कि निजी निवेश हमेशा बढता रहेगा। उसके बाद निजी निवेश मौद्रिक नीति और राजकोषीय नीति पर निर्भर करता है। मौद्रिक नीति केन्द्रीय बैंक की मुद्रा की मांग और मुद्रा की पूर्ति को नियंत्रित करती है और राजकोषीय नीति सरकार की एक वर्ष की सरकारी आय और व्यय की नीति होती है। इसके बाद निवेश के लिए उचित तकनीक का भी चुनाव करना पडता है। एक देश में अगर बेरोजगारी अधिक है तो उस देश को श्रम गहन तकनीक का प्रयोग करना चाहए। इस इकाई में निवेश करने के लिए लागत लाभ विश्लेषण का भी अध्ययन करेंगे।

3.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के निम्नलिखित उद्देश्य है।

- राजकोषीय नीति और मौद्रिक नीति का आर्थिक विकास में योगदान का मूल्यांकन करना।
- निवेश के लिए तकनीक के चुनाव का अध्ययन करना
- निवेश की कसौटी का अध्ययन करना

3.2 मौद्रिक नीति का आर्थिक विकास में योगदान

मौदिक नीति से अभिप्राय रिजर्व बैंक की उस नीति से है जिसके द्वारा मुद्रा की मांग और पूर्ति पर नियंत्रण से है। मौदिक नीति का सम्बन्ध उस मुद्रा प्रबन्धन से है जिसका मुख्य उद्देश्य कुछ विशेष लक्ष्यों की प्राप्ति करना है। मुख्य रूप से मौद्रिक नीति के सभी यन्त्र वही है जो साख नियन्त्रण के यन्त्र है। मौदिक नीति को काफी लाभदायक और व्यवहारिक माना गया है। देश की समस्याओं को जानकर समय – समय पर मौद्रिक नीति के उद्देश्य निर्धारित होते है। कई बार ऐसा भी हो जाता है कि इसके उद्देश्य परस्पर विरोधी होते है और रिजर्व बैंक को प्राथमिकता के आधार पर निर्णय लेना पडता है। मौदिक नीति के कुछ मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है।

1 विनिमय स्थिरता
2 पूर्ण रोजगार
3 भुगतान शेष सन्तुलन
4 कीमत स्थिरता
5 आर्थिक वृद्धि
6 मुद्रा की तटस्थता

आर्थिक विकास के लिए मौद्रिक नीति

मौद्रिक नीति की आर्थिक विकास के लिए भूमिका का वर्णन इस प्रकार है।

1 मुद्रा की मांग और पूर्ति में उपयुक्त समन्वय

मुद्रा की मांग आर्थिक विकास के कारण बढती है। आर्थिक वृद्धि और जीविका क्षेत्र के सिकुडने के कारण भी मुद्रा की मांग बढती है। मुद्रा की मांग बढने का एक मुख्य कारण प्रति व्यक्ति आय तथा जनसंख्या में वृद्धि भी है। जब मुद्रा की मांग बढती जाती है तो मुद्रा – अधिकारियों द्वारा मुद्रा की पूर्ति को भी बढाना चाहिए । जब मुद्रा की पूर्ति में वृद्धि होती है तो वह आय में वृद्धि के बराबर होनी चाहिए। क्योंकि ऐसा होने पर कीमतों में कमी नही होती। आर्थिक विकास मूल्य स्तर में कमी के कारण प्रभावित होता है। ऐसा होने पर उत्पादन घटने लगता और आय का दुःश्चक्र शुरू हो जाता है। यदि मुद्रा की पूर्ति काफी मात्रा में बढ जाती है तो उसका प्रयोग सटेबाजी के लिए भी किया जा सकता है। सट्टेबाजी के कारण विकास में बाधा उत्पन्न होती है और ऐसा होने पर स्फीति उत्पन्न हो जाती है।

2 निवेश को प्रोत्साहन

प्रो0 मायर तथा बालडविन ने माना है कि किसी समया को केवल नई संस्थाओं के निर्माण द्वारा हल नही किया जा सकता। समस्या का समाधान तब हो सकता है जब बचतों का लाभप्रद विनियोजन किया जाए। अतः कहा जा सकता है की जब तक बचते प्राप्त होती है तो यदि उन बचतों को सही तरीके से निवेश नही किया गया तो आर्थिक विकास नही हो सकता। जो अल्पविकसित देश होते है उनमें निवेश ज्यादा मात्रा मे।प्रोत्साहित नही होते क्योंकि इन देशों में ब्याज की ऊंची दर पाई जाती है तथा पूंजी की सीमान्त कार्यक्षमता कम होती है।

3 भुगतान असन्तुलन

अल्पविकसित देशों में पाया जाता है कि उनके निर्यातों से आयात अधिक मात्रा में होते है। यह अल्पविकसित देशों की विकास के लिए प्रारम्भिक अवस्था होती हे। यदि किसी परियोजना का आरम्भ किया जाता है तो उसके लिए काफी मात्रा में पूंजीगत सामान, मशीनें तथा उपकरण चाहिए जिन्हे केवल विकसित देशों द्वारा पूरा किया जाता है। इसलिए अल्पविकसित देशों को ये सभी सामान विकसित देशों से आयात

करने पडते है। इस प्रकार अधिक आयात और कम निर्यात के फलस्वरूप इन देशों में भुगतान असन्तुलन की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

4 अतिरिक्त साधन उपलब्ध कराना

मौद्रिक नीति का एक अत्यन्त मुख्य कार्य सरकार को पूंजी निर्माण के लिए अतिरिक्त साधन उपलब्ध कराना भी है। घटे की वित्त व्यवस्था द्वारा सरकार पूंजी निर्माण भी कर सकती है। सरकार द्वारा विकास के लिए निवेश किया जाता है जोकि अतिरिक्त साधन उपलब्ध कराके किया जाता है।

5 ब्याज – दर की संरचना

ब्याज – दर संरचना काफी ऊंची होती है अल्पविकसित देशों में तो ब्याज की दरे ऊंची होती है उनके कारण निजी और सार्वजनिक दोनो ही क्षेत्रों में काफी बडी मात्रा में बाधा उत्पन्न होती है। एक निवेशकर्ता द्वारा पूंजी बाजार से तभी ब्याज पर उद्यार लिया जाता है यदि ब्याज दर नीची है तो। अतः इसके लिए कहा जा सकता है कि निवेशकत्ताओं को ऋण लेने के लिए केन्द्रीय बैंक द्वारा सस्ती मुद्रा – नीति को अपनाकर प्रोत्साहित किया जा सकता है।

6 कीमत स्थिरता

आर्थिक विकास की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आवश्यक शर्त कीमत स्थिरता की भी है। कई प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों द्वारा माना गया है कि आन्तरिक मूल्यों में स्थिरता बनाए रखना मौद्रिक नीति का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। यदि कीमत अस्थिरता आ जाती है तो सामाजिक अन्याय को बढावा मिल जाता है और आर्थिक संकट को भी बढावा मिलता है। बढती तथा घटती हुई कीमतें, दोनो ही समाज के लिए नुकसानदायक होती है।

7 साख नियन्त्रण

एक विकासशील अर्थव्यवस्था में मौद्रिक नीति का मुख्य लक्ष्य साख पर नियन्त्रण का होना चाहिए। साख नियन्त्रण के मुख्य उपाय दो होते है एक मात्रात्मक तथा दूसरा गुणात्मक होता है। साख नियन्त्रण के लिए इन दोनो उपायों को प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

3.3 राजकोषीय नीति का आर्थिक विकास में योगदान

राजकोषीय नीति से अभिप्राय सरकार की आय, व्यय तथा ऋण से सम्बन्धित नीतियों से है। सरकार के आय तथा व्यय के राष्ट्रीय आय, उत्पादन तथा रोजगार पर कई प्रकार के सही तथा गलत प्रभाव पडते है। सरकार द्वारा इन प्रभावों को रोकने के लिए राजकोषीय नीति का प्रयोग किया जाता है। राजकोषीय और वित्तीय नीति दोनो ही अलग – अलग होती है। राजकोषीय नीति में मुख्य रूप से चार को शामिल किया जाता है।

1 सरकार की कर नीति
2 सरकार की व्यय नीति
3 सरकार की ऋण नीति
4 सरकार की बजट नीति

राजकोषीय नीति के अल्पविकसित देशो के लिए उद्देश्य

राजकोषीय नीति का मुख्य कार्य आर्थिक विकास के लिए धन उपलब्ध कराना है। राजकोषीय नीति के अल्पविकसित देशों के लिए मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है

1 राष्ट्रीय आय में वृद्धि

राजकोषीय नीति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण उद्देश्य राष्ट्रीय आय में वृद्धि करने का है। यह प्रत्यक्ष रूप से नही बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से सहायता करती है। राजकोषीय नीति द्वारा राष्ट्रीय आय को कई प्रकार से बढाया जा

सकता है। जैस 1. कर लगा कर उसके द्वारा प्राप्त आय को तुरन्त निवेश करना। 2. निजी उद्यमियों को वित्तीय सहायता देना ताकि वो निवेश करने के लिए प्रेरित हो। 3. जो भी सार्वजनिक ऋण लिया जाता है तथा सरकार द्वारा जो व्यय किया जाता है वह सभी विकास कार्यो पर खर्च करना चाहिये। यदि इस प्रकार की प्रक्रिया सरकार द्वारा अपनाई जाती है तो राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने पर देश का आर्थिक विकास स्वयं होने लगता है।

2 रोजगार में वृद्धि

राजकोषीय नीति का एक उद्देश्य पूर्ण रोजगार को प्राप्त करना है क्योंकि आर्थिक विकास का एक लक्ष्य रोजगार को बढाना है। इस कार्य में राजकोषीय नीति का सार्वजनिक खर्च वाला यन्त्र ज्यादा काम करता है। जैसे की यदि हमें पता हो कि उच्च श्रमिक किसी विशेष सीजन में बेरोजगार हो जाते है तो सरकार उस विशेष सीजन में बेरोजगारी के दूर करने के लिए कुछ कार्यक्रम चला सकती है जोकि रोजगार को बढाए। इसी तरह से सरकार हास्पितल, स्कूल, सडक, बांध, नहरे, बना कर लोगों को काम दे सकती है। इनसे एक तरफ तो बेरोजगारी कम होती है और दूसरी तरफ आधारभूत संरचना का निर्माण होता है। आज के समय भारत में इस तरह की जोकि रोजगार को बढाए वह स्कीम महात्मा गांधी ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) है। मनरेगा ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार परिवारों को रोजगार की गारंटी देता है। यह काम सरकार का है कि अपनी राजकोषीय नीति से इस तरह का वातावरण तैयार करे जिससे की रोजगार को बढाया जा सके। रोजगार को बढाने की कुछ अन्य स्कीमें भी है जैसे की राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, रोजगार गारंटी योजना, काम के बदले अनाज योजना, जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना इत्यादि। इस तरह के कार्यक्रम का उद्देश्य अतिरिक्त रोजगार का सर्जन करना है जिससे की बेरोजगार और अल्परोजगार को काम मिल सके और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए परिसम्पतियां तैयार की जा सके। ऐसा करने से ग्रामीण क्षेत्रों कें जीवन का स्तर बढ जायेगा।

3 मुद्रास्फीति पर नियंत्रण

अल्पविकसित देश अपने देश में औद्योगीकरण के लिए संसाधनों की कमी पाते है, जिस कारण से वो घाटे की वित्त व्यवस्था पर निर्भर होते है परन्तु जब घाटे की वित्त व्यवस्था से परिसम्पतियां नही बढती है तो इससे महंगाई बढने लगती है और मंहगाई का बढना विकास की लागत को भी बढा देता है और गरीब लोगों के जीवन को पहले से ज्यादा कष्टकारी बना देते है। इसलिए राजकोषीय नीति का एक मुख्य उद्देश्य मुद्रा प्रसार पर रोक लगाना भी है। मुद्रा प्रसार पर रोक लगाने से प्रभावपूर्ण मांग कम हो जाती है। मुद्रा प्रसार को कम करने के लिए यह आवश्यक है कि करों में वृद्धि की जाये और जनता की बचतों को बढाया जाये। अन्य उपाय जैसे की मुद्रा स्फीति विरोधी कर, लाभ पर कर, व्यय – कर, उपहार कर आदि है। कर नीति ऐसी हो की जिससे बचत बढ सके और उपभोक्ता की क्रय – शक्ति को नियंत्रित किया जा सके। परन्तु कुछ अर्थशास्त्रियों का यह भी मत है कि अर्थव्यवस्था में निराशपूर्ण वातावरण तैयार होता है।। विकासशील अर्थव्यवस्था में जो भी स्फीतिकारी प्रवृत्ति पाई जाती है राजकोषीय नीति द्वारा उन्हें ठीक किया जाता है। जहां पर स्फीतिकारी प्रवृत्ति पाई जाती है वहां पर मांग और पूर्ति में असंतुलन होता है। जब लोगो।की क्रय – शक्ति बढती है तो मांग भी बढती है परन्तु अथव्यवस्था में कई प्रकार की अडचने आ जाती है जिस कारण पूर्ति अपेक्षाकृत बेलोच ही रहती है। क्योंकि उनके द्वारा जो भी आवश्यक वस्तुएं होती है उनकी पूर्ति को रोका जाता है।

4 निवेश में वृद्धि

अल्पविकसित देशों में प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय काफी कम होती है। जिस कारण बचते भी कम होती है और बचते कम होने से निवेश भी कम होता है। इस तरह अल्पविकसित देश निर्धनता के दुःश्चक्र में फंसे रहते है। इसलिए निर्धनता के दुःश्चक्र को तोडने के लिए राजकोषीय नीति का काफी महत्व है। क्योंकि अल्पविकसित

देशों में उपभोग प्रवृति अधिक होती है जिस कारण बचते कम होती है। उपभोग पर कर लगा कर उपभोग को कम किया जा सकता है और बचतों को बढाया जा सकता है। ऐसा करने से निवेश की मात्रा बढ जाती है। राजकोषीय नीति का एक मुख्य लक्ष्य अर्थव्यवस्था के दोनो ही क्षेत्रों निजी तथा सार्वजनिक में निवेश को काफी मात्रा में बढाना है। कुछ निवेश इस प्रकार के होते है कि उन्हें अर्थव्यवस्था के लिए बढाना आवश्यक है तथा कुछ निवेश इस प्रकार के है की उन्हें अर्थव्यवस्था के लिए हतोत्साहित करना आवश्यक है। इन दोनों प्रकार के निवेश के लिए राजकोषीय नीति अत्यन्त आवश्यक है। राजकोषीय नीति के कारण निवेश में वृद्धि होती है तथा इस कारण पूंजी निर्माण में वृद्धि होती है।

5 आय की असमानता को कम करना

आर्थिक विकास की आवश्यकता और लक्ष्य आय की असमानता को कम करना है। आय की असमानता कम सरकार राजकोषीय नीति द्वारा कर सकती है। आय की असमानताएं सामाजिक अंतर पैदा करती है। जिससे की राजनैतिक अस्थिरता आ सकती है और यह आर्थिक विकास में एक बाधा बनती है। कुछ लोगों के हाथ में धन होने से वो आय का दुरूप्रयोग करते है जबकि अल्पविकसित देशों में 75 प्रतिशत लोगों की न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी नही होती है। राजकोषीय नीति इस अनुत्पादक धन को उत्पादक कार्यो में लगाती है। इसके कुछ उपाय इस प्रकार है। 1. अमीर लोगों पर प्रगतिशील कर लगाये गए। 2. निर्धन लोगों को विभिन्न योजनाओं का फायदा दिया जाये। 3. विलासिता की वस्तुओं पर भारी मात्रा में कर लगाया जाए। ऐसा करने से सरकार के पास अतिरिक्त मात्रा में बचते पैदा हो जाती है।

6 आर्थिक स्थिरता को बढावा देना

राजकोषीय नीति चक्रीय उतार – चढाव को कम करके आर्थिक स्थिरता को बढावा देती है। खुल अर्थव्यवस्था के कारण चक्रीय उतार – चढाव का प्रतिकूल प्रभाव पडता है। अल्पविकसित देश कृषि – वस्तुओं का निर्यात करते है और निर्मित वस्तुओं का आयात करते है क्योंकि कृषि वस्तुओं की आय लोच कम होती है। इसलिए व्यापार की शर्तो पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है। जिससे की अल्पविकसित देशों में आय का स्तर गिर जाता है। जबकि निर्मित वस्तुओं में ऐसा नही होता। राजकोषीय नीति का लक्ष्य विविधत लाना और विभिन्न क्षेत्रों में सन्तुलित विकास होना चाहिए। मन्दी के समय घाटे का बजट बनाना चाहिए और तेजी के समय बचत का बजट बनाना चाहिए। अतः राजकोषीय नीति द्वारा आर्थिक स्थिरता को बढावा मिलता है।

3.4 तकनीक का चुनाव

विकासशील देशां की सबसे बडी समस्या दुर्लभ साधनों के श्रेष्ठतम उपयोग की है। क्योंकि विकासशील देशों में श्रम की मात्रा अधिक होती है और पूंजी की मात्रा कम होती है। इसलिए श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाए या पूंजी प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाए। यह बिल्कुल भी ठीक नही होगा कि अलग – अलग तरह की अर्थव्यवस्था के लिए एक ही तरह की तकनीक का चुनाव किया जाए और न ही ऐसा करना सम्भव है। अल्पविकसित राष्ट्रों की एक अत्यन्त मुख्य समस्या यह है कि जो साधन उपलब्ध है उनका किस प्रकार से प्रयोग करके आर्थिक और औद्योगिक विकास की दर को अधिकतम करे। जब इस प्रकार की समस्या हो तो उत्पादन की तकनीक के ऐसे स्वरूप का चयन करना चाहिये जिससे की जो भी उत्पादन के उपलब्ध साधन है उनसे अधिक मात्रा में उत्पादन किया जा सके।

तकनीक के प्रकार

विकासशील देशो में तकनीक से सम्बन्धित कई प्रकार के विकल्प सामने होते है। उन सभी में से किसी एक निश्चित तकनीक का चुनाव करना होता है। तकनीक का वर्गीकरण मुख्यतया निम्न प्रकार से किया जाता है।

1. श्रम – प्रधान तकनीक का अर्थ

श्रम प्रधान तकनीक से अभिप्राय है की तुलनात्मक रूप से श्रम की अधिक मात्रा के साथ पूंजी की कम मात्रा का प्रयोग किया जाता है। श्रम प्रधान तकनीक श्रम पर ही अधिक निर्भर होती है पूंजी की अपेक्षा। श्रम – प्रधान तकनीक को पूंजी बचाव उपाय भी कहा जा सकता है। उत्पादन पर श्रम – प्रधान तकनीक के पड़ने वाले

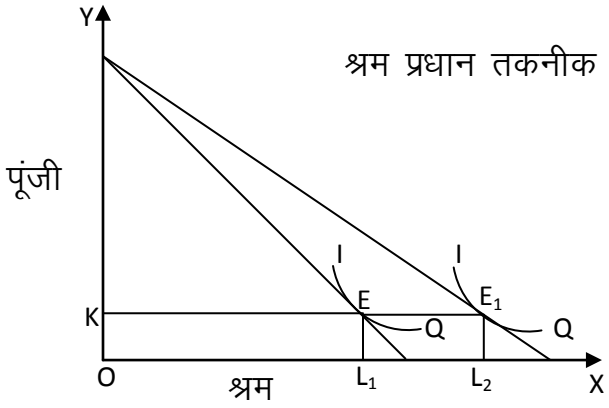

प्रभाव की चित्र द्वारा व्याख्या

चित्र में OX - अक्ष पर श्रम की मात्रा तथा OY - अक्ष पर पूंजी की मात्रा को प्रकट किया गया है। अर्थव्यवस्था में उत्पादन के प्रारम्भिक स्तर को IQ द्वारा दिखाया गया है। इस प्रारम्भिक स्तर पर श्रम की OL_1 मात्रा तथा पूंजी की OK मात्रा है। अब श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है तो श्रम की नयी मात्रा OL_2 तथा पूंजी की उतनी ही मात्रा का प्रयोग करके उत्पादन का स्तर बढ कर IQ_1 हो जाता है। इस IQ_1 उत्पादन पर श्रम की मात्रा बढकर OL_2 हो जाती है तथा पूंजी की मात्रा उतनी ही OK रहती है। इसलिए इसे श्रम प्रधान तकनीक कहा जाता है।

तकनीक का समर्थन

कई अर्थशास्त्रियों द्वारा श्रम – प्रधान तकनीक का समर्थन किया गया है। उन अर्थशास्त्रियों में शामिल है। मायर एवं बाल्डविन, किन्डलबर्जर, कुजनेट्स, लुइस, नर्कसे आदि। विकासशील श्रम की अधिकता पाई जाती है। तथा पूंजी की कमी पाई जाती है। विकसित देशों की तरह पूंजी प्रधान तकनीक को अल्पविकसित देशों में जनसंख्या की अधिकता होती है उनको श्रम – प्रधान तकनीक को अपनाना चाहिए ताकि आर्थिक विकास के साथ – साथ बेरोजगारी की समस्या का भी हल किया जा सके।

2. पूंजी प्रधान तकनीक का अर्थ

पूंजी प्रधान तकनीक से अभिप्राय उस तकनीक से है जहां तुलनात्मक रूप से श्रम की अपेक्षा पूंजी का अधिक प्रयोग किया जाता है। पूंजी प्रधान तकनीक श्रम की अपेक्षा पूंजी पर अधिक निर्भर होती है। पूंजी प्रधान तकनीक को श्रम – बचाव उपाय भी कहा जा सकता है। उत्पादन पर पूंजी – प्रधान तकनीक के पडने वाले प्रभाव की चित्र द्वारा व्याख्या

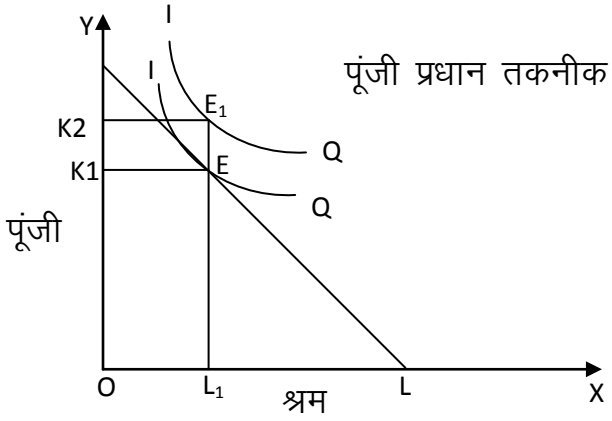

चित्र में OX - अक्ष पर श्रम तथा OY - अक्ष पर पूंजी को प्रकट किया गया है। उत्पादन के प्रारम्भिक स्तर को IQ वक्र द्वारा प्रकट किया गया है। उत्पादन के इस IQ स्तर को पूंजी की OK मात्रा तथा श्रम की OL मात्रा द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। अब उत्पादन की नयी तकनीक अपनाने पर श्रम की उतनी ही मात्रा OL तथा पूंजी की K_2 मात्रा का प्रयोग किया जाता है और इस पर उत्पादन का स्तर IQ है।

तकनीक का समर्थन

कई अर्थशास्त्रियों द्वारा पूंजी – प्रधान तकनीक का समर्थन किया गया है। उन अर्थशास्त्रियों में शामिल है। – पाल बशन, हर्षमैन, लिबिन्सटीन आदि। पूंजी प्रधान तकनीकों के समर्थकों का मानना है की इस तकनीक से आर्थिक विकास की प्रक्रिया को काफी मात्रा में बढावा मिलता है।

श्रम प्रधान तकनीक के पक्ष में तर्क

श्रम प्रधान तकनीक के पक्ष में मुख्य तर्क इस प्रकार है।

1. **रोजगार में वृद्धि**
   अल्पविकसित देशों में श्रम की अधिकता होती हैं जबकी पूंजी की कमी पाई जाती है। श्रम की अधिकता होने के कारण बेरोजगारी की समस्या बढ जाती है। इन देशों में जब श्रम – प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है तो श्रम – शक्ति का सदुपयोग करके रोजगार में वृद्धि की जाती है।
2. **आय का समान वितरण**
   श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग करके रोजगार में वृद्धि की जाती है। रोजगार में वृद्धि होने पर राष्ट्रीय आय कई हाथों में वितरीत की जाती है तथा इस प्रकार की प्रक्रिया होने पर आय का समान वितरण होता है तथा आर्थिक विषमताएं दूर होने लगती है।
3. **पूंजी का सही ढंग से प्रयोग**
   अल्पविकसित देशों में पूंजी का अभाव होता है। जब श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है तथा पूंजी की कमी पाई जाती है तो इन देशो में पूंजी का सही प्रकार से प्रयोग किया जाता है। पूंजी को गलत आवंटन होने से बचाया जा सकता है।
4. **मुद्रा – प्रसार पर रोक**
   अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में श्रम – प्रधान तकनीक का प्रयोग करके मुद्रा प्रसार पर रोक लगाई जा सकती है इसका मुख्य कारण है कि श्रम – प्रधान तकनीक अपनाने पर उपभोक्ता वस्तुओं की पूर्ति

शीघ्र तथा बडी मात्रा में होने लगती है जिसके कारण मुद्रा के प्रसार पर रोक सम्भव होता है जोकि एक देश के आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

5. उपभोग को बढाना

श्रम प्रधान तकनीक का अल्पविकसित देशों के लिए यह भी अनुकूल प्रभाव है कि उपभोग के स्तर को बढाया जा सकता हे। इस तकनीक के कारण मजदूरी के स्तर को भी बढाया जा सकता है जिसके कारण उपभोग पर व्यय बढता है।

6. उत्पादन की सस्ती तकनीकों का प्रयोग

अल्पविकसित देशों में श्रम की अपेक्षा पूंजी मंहगी होती है। यह भी हो सकता है कि श्रम की कीमत शून्य हो जाये। अल्पविकसित देशों को इस प्रकार से उत्पादन करना चाहिए कि श्रम का अधिक तथा पूंजी का कम मात्रा प्रयोग में लाई जाए। ऐसा करने पर अर्थव्यवस्था में दवाब कम मात्रा में पडता है।

7. औद्योगीकरण के दोषों से मुक्ति

अल्पविकसित देशों में श्रम – प्रधान तकनीक का प्रयोग कुटीर व लघु उद्योगों के विकास पर आधारित होने के कारण औद्योगीकरण के दोषों से अर्थव्यवस्था को दूर रखती है। श्रम – प्रधान तकनीक के अन्तर्गत जो भी उत्पादन किया जाता है। वह बहुत ही हल्के औजारो तथा अत्यधिक सरल विधि द्वारा किया जाता है जिसके कारण औद्योगीकरण के दोषों से काफी बडी मात्रा में मुक्ति मिलती है।

8. आर्थिक लागत

श्रम प्रधान तकनीक का एक अत्यंत महत्वपूर्ण लाभ यह भी है कि इसके कारण सामाजिक और आर्थिक लागत काफी मात्रा में कम हो जाती हे।। अल्पविकसित देशों में छोटे पैमाने पर कार्य किए जाते है। इस कारण यहां श्रमिकों के लिए समाज कल्याण की आवश्यकता नही होती है।

पूंजी – प्रधान तकनीक के पक्ष मे तर्क

पूंजी प्रधान तकनीक के पक्ष में मुख्य तर्क इस प्रकार है।

1 अधिक विकास दर

अल्पविकसित देशो में पूंजी प्रधान तकनीक का प्रयोग यह सोच – समझ कर भी किया जाता है की यदि पूंजी – गहन तकनीक प्रयोग करे तो विकास की दर अधिकतम मात्रा में हो सकती है और इस प्रकार की प्रक्रिया के कारण आय, रोजगार और उत्पादन को काफी मात्रा में बढावा मिलता है। अतः कहा जा सकता है अल्पविकसित देशों के लिए पूंजी – प्रधान तकनीक का होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

2 रोजगार में बढोतरी

कुछ अर्थशास्त्रियों का मानना है कि पूंजी – गहन तकनीक में रोजगार में वृद्धि होती है। इस प्रकार की तकनीक का प्रयोग करने पर विकास की दर अधिक तेजी से बढती है तथा ऐसा होने पर दीर्घकाल में लोगों को रोजगार अत्यन्त मात्रा में मिलने लगता है।

3 श्रमिकों की कुशलता में वृद्धि

अल्पविकसित देशों में जब पूंजी प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है तो उसके कारण श्रमिकों की अत्यन्त मात्रा में कुशलता में वृद्धि होती है क्योंकि श्रमिकों द्वारा एक ही कार्य बार – बार किया जाता है।

4 जीवन – स्तर में वृद्धि

जब पूंजी प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता है तो काफी बडे पैमाने पर उत्पादन किया जाता है जिस कारण उत्पादन करने की प्रति – इकाई लागत कम आती है। जब वस्तुओं की लागत कम आती है तो लोगों द्वारा अधिक मात्रा में उपभोग किया जाता है तथा उपभोग की मात्रा बढने के कारण लोगों के रहन – सहन के स्तर में वृद्धि होने लगती है।

5 अधोः संरचना का विकास

किसी भी देश का आर्थिक विकास करने के लिए यह आवश्यक है कि उस देश की अधोःसंरचना का विकास किया जाये। अधोः संरचना का विकास पूंजी – गहन तकनीक द्वारा ही सम्भव है। अतः इन देशों के लिए पूंजी – प्रधान तकनीकों का अपनाया जाना आवश्यक है।

6 प्रति – श्रमिक उत्पादकता में वृद्धि

आर्थिक विकास की मुख्य कसौटी प्रति – श्रमिक उत्पादका में वृद्धि होना है। जब प्रति – श्रमिक उत्पादकता में वृद्धि होती है तो पूंजी – निर्माण में भी वृद्धि होती है जोकि आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। जब पूंजी – प्रधान तकनीक का प्रयोग किया जाता तो प्रति – श्रमिक उत्पादकता में वृद्धि होती है।

3.4.1 उचित तकनीक

आर्थिक विकास की दृष्टि से देखा जाए तो देश के सामने बहुत ही बडा संकट है कि आर्थिक समृद्धि के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बडे पैमाने के उद्योगों को महत्व दिया जाए या फिर छोटे पैमाने के उद्योगों को ? जब औद्योगीकरण की तीव्र आवश्यकता होती है तो बडे पैमाने पर उद्योगों का विकास करना चाहिए तथा जब देश में धन के वितरण की विषमता को दूर करना, बेरोजगारी, गरीबी आदि का निवारण करना हो तो छोटे पैमाने के उद्योगों विकास करना चाहिए लेकिन इन उद्योगों का चुनाव करना सबसे बडा सवाल नही है बल्कि यह है कि गरीबी को दूर करना बनाम दरिद्रता, आर्थिक विकास बनाम आर्थिक विषमताएं, रोजगार बनाम बेरोजगारी, बडे पैमाने बनाम छोटे पैमाने के उत्पादन और पूंजी प्रधान तकनीक बनाम श्रम प्रधान तकनीकी के चुनाव का प्रश्न है। जब भारी उद्योगों को लगाया जाता है तो पूंजी निर्माण में वृद्धि होगी, बाजारों को बढावा मिलेगां, साधनों का सही प्रकार से उपयोग होगा। लेकिन बेरोजगारी, गरीबी, निम्न जीवन स्तर, भुखमरी और निम्न जीवन स्तर को केवल लघू और कुटीर उद्योगों के विकास द्वारा ही दूर किया जा सकता है परन्तु इस प्रकार से देश में तेजी से होने वाले उद्योगीकरण को बढावा नही मिल सकता। देश के आर्थिक विकास के लिए 2 अलग – अलग विचारधाराएं है। एक विचारधारा पूंजीप्रधान तकनीक की है तथा दूसरी विचारधारा श्रम प्रधान तकनीक की है जिसके कारण कुटीर तथा लघू उद्योगो को बढावा मिलता है जो अर्थव्यवस्था के लिए अति आवश्यक है। गलैसन, लिबिन्स्टीन आदि पूंजी प्रधान तकनीक को आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते है जबकि किण्डलबर्जर, नर्कसे, कुजनेट्स ने श्रम – प्रधान तकनीक को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना है।

3.5 निवेश की कसौटियां

अल्पविकसित देशों में संसाधनों की कमी होती है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि सीमीत संसाधनों का अपना उद्देश्य के साथ आबंटन किया जाये। संसाधनों का उचित उपयोग करना आवश्यक होता है। ऐसा करने से आर्थिक विकास की गति बढ जाती है। इस प्रकार आर्थिक विकास संसाधनों के आबंटन पर आधारित होता है। प्रो0 आस्कर लेंज के अनुसार अल्पविकसित देशो की मुख्य समस्या पर्याप्त मात्रा में उत्पादक विनियोगों को करने की नही होती, बल्कि उन उत्पादक विनियोगों को किन्ही उपयुक्त क्षेत्रों की ओर प्रवाहित करने की होती है। ताकि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता में तेजी से वृद्धि हो सके। चुनाव को लेकर निवेश के आबंटन की बहुत सी समस्याएं पैदा होती है। सबसे पहले अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में कुल कितना निवेश किया जाये ? दूसरा, केवल एक क्षेत्र में विभिन्न परियोजनाओं पर किस प्रकार से अलग– अलग निवेश किया जाये ? तीसरा कौन – कौन सी तकनीकों का अलग – अलग क्षेत्रों मे निवेश किया जाये। चौथा, जब निवेश के लिए खर्च किया जाता है तो कौन सी परियोजना पर पहला खर्च किया जाए ? पांचवा, निवेश आबंटन कितनी समय अवधि में किया जाए ? निवेश आबंटन का चुनाव अल्पविकसित देशों मे।विकास आयोजन के उद्देश्य पर निर्भर करते है। एक योजना के बहुत से

उद्देश्य होते है जैसे बेरोजगारी को कैसे कम किया जाये, गरीबी को दूर करना, उत्पादन को बढावा देना, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि, आर्थिक वृद्धि को बढाना, आय वितरण में समानता आदि।

साधनों के आबंटन की आवश्यकता एवं महत्व

एक अर्थव्यवस्था के लिए साधनों का आबंटन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जब तक साधनों का सर्वोत्तम ढंग से आबंटन नही किया जाता तब तक आर्थिक विकास को प्राप्त नही किया जा सकता। साधनों के आबंटन की आवश्यकता आर्थिक विकास के लिए कुछ कारणों से होती है जो इस प्रकार है।

1 **सन्तुलित विकास**
सन्तुलित विकास का सम्बन्ध नियोजित अर्थव्यवस्था से है। अल्पविकसित देशों में सन्तुलित विकास का होना आवश्यक है और निवेश आबंटन द्वारा संतुलित विकास सम्भव है।

2 **उचित निर्णय**
साधनों के बहुत सारे उचित प्रयोग हो सकते है। उत्पादन के साधनों का प्रयोग प्रतिस्थापन के नियम के अनुसार करना चाहिए। ऐसा करने से उत्पादन के प्रत्येक साधन के समान प्रतिफूल प्राप्त होते है।

3 **लोक कल्याण**
नियोजित अर्थव्यवस्था का मुख्य उद्देश्य आर्थिक कल्याण को बढाना होता है। ऐसा करने के लिए साधनों का किफायतपूर्ण प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है।

4 **चुनाव की समस्या**
साधनों के किफायतपूर्ण प्रयोग तभी सम्भव हो सकते है जब हम साधनों का चुनाव उचित ढंग से करें।

5 **विकास**
जब तक सभी समस्याओं का हल एक – साथ नही किया जायेगा तो देश का आर्थिक विकास पूर्ण नही हो पायेगा।

निवेश की विभिन्न कसौटिया :

1 पूंजी उत्पाद अनुपात मापदण्ड

इस मापदण्ड का प्रतिपादन जे0 जे0 पालक और एन0 एस0 बुचानन ने किया था। इस मापदण्ड का उद्देश्य पूंजी की एक इकाई से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने का होता है। इस प्रकार यह मापदण्ड राष्ट्रीय आय में वृद्धि करता है क्योंकि पूंजी वहां लगानी चाहिए जहां पर उत्पादन अधिक हो।

$$\text{पूंजी उत्पाद अनुपात} = \frac{\Delta Y}{\Delta K}$$

$\Delta Y =$ राष्ट्रीय उत्पाद मे।परिवर्तन

$\Delta K =$ पूंजी के स्टॉक में परिवर्तन

क्योंकि अल्पविकसित देशों में पूंजी का अभाव होता है इसलिए इन देशों में यह तकनीक उपयुक्त होती है क्योंकि यह तकनीक पूंजी की किफायतपूर्ण प्रयोग पर ध्यान देती है। इसमें निवेश उन परियोजनाओं में करना चाहिए जिसमें उत्पादन पूंजी का अनुपात अधिकतम हो। पालक के अनुसार कम पूंजी लगने वाली परियोजनाएं शीघ्र लाभदायक होती है और इसमें पुनः निवेश की सम्भावना बढती है। इस मापदण्ड में विभिन्न परियोजनाओं का उनके उत्पाद पूंजी अनुपात को देखकर एक क्रम तैयार करना चाहिए और जहां पर पूंजी टर्न ओवर दर सबसे अधिक है वहां पर निवेश करना चाहिए। यह मापदण्ड उत्पादन के साथ रोजगार के स्तर को भी बढाता है। अधिक उत्पादन दर वाली परियोजना कम आयात वाली होती है। जिससे कि हमारे देश के विदेशी विनिमय भंडार बचे रह जाते है। यह

मापदण्ड श्रम गहन तकनीक का समर्थन करता है जिससे की अर्थव्यवस्था में धन के वितरण की समानता बढती है परन्तु इसकी कुछ आलोचना भी है।

1 जैसे की हम जानते है कि शुरू में अधिक उत्पाद वाली परियोजनाओं का चयन किया जाता है परन्तु सार्वजनिक उपयोगिता वाले निवेश की प्रतिफल दर बहुत कम होती है तो ऐसा करने से इस प्रकार के निवेश परियोजनाओं में कम निवेश की मात्रा लगेगी।
2 इस मापदण्ड में समय को दृष्टि में नही रखा गया है। कुछ परियोजनाओं का प्रतिफल अल्पकाल में तो कम होता है लेकिन दीर्घकाल में बढ जाता है।
3 यह मापदण्ड गतिहीन है। यह निवेश के अन्य क्षेत्रों मे।पडने वाले प्रभाव को नजर अंदाज कर देते है। इस सिद्धान्त में विभिन्न परियोजनाओं का जीवन काल भी अलग – अलग होता है। इसलिए परियोजनाओं का चयन करना मुश्किल हो जाता है।
4 प्रो0 मौरिस डाब के अनुसार विकास के शुरूआती दौर में श्रम प्रधान परियोजनाओं के चयन करने से अकुशल उत्पादन पद्धतियों का विकास होने लगता है जिससे की दीर्घकाल में श्रम की उत्पादकता कम हो जाती है।
5 यह मापदण्ड स्थिर पूंजी उत्पाद अनुपात की बात करता है परन्तु स्थिर पूंजी उत्पाद अनुपात कई तत्वों पर आधारित होता है। इनमें से किसी में भी परिवर्तन होने से पूंजी उत्पाद अनुपात बदल जाता है।
6 यह मापदण्ड उत्पाद को संकुचित रूप में लेता है। यह मापदण्ड केवल प्रत्यक्ष उत्पाद को शामिल करता है जबकि निवेश के सामाजिक लाभ भी हो सकते है परन्तु यह मापदण्ड सामाजिक लाभों की गणना नही करता है।

2. सामाजिक सीमांत उत्पादकता मापदण्ड

इस मापदण्ड का विकास प्रो0 के0 ई0 काह्न ने 1951 में किया और बाद में प्रो0 एच0 बी0 चैनरी ने और आगे विकसित किया। इसे राष्ट्रीय आर्थिक लाभदायिकता मापदण्ड भी कहा गया है। इस मापदण्ड में विभिन्न क्षेत्रो और उद्योगों में निवेश का आबंटन इस प्रकार हो कि विभिन्न परियोजनाओं में निवेशित पूंजी की सामाजिक सीमांत उत्पादकता (SMP) समान हो जाए। किसी एक परियोजना में किए गए निवेश को निम्न समीकरण द्वारा तैयार किया गया है।

$$SMP=\frac{X+E-L-M-O}{K}$$

SMP= सामाजिक सीमांत उत्पादकता

X= उपज का बढा हुआ बाजार मूल्य

E= बाह्रा मित्तव्ययिताओं के कारण उपज के मूल्य में बढोतरी

L= श्रम की लागत

M= कच्ची सामग्री की लागत

O= अन्य लागते ह्रास लागत सहित

K= विनियोजित पूंजीगत कोष।

इस समीकरण को इस तरह से भी लिख सकते है की

$$SMP = \frac{U-C}{K}$$

जहां U= सामाजिक मूल्य वृद्धि

C= लागत

K= विनियोजित पूंजीगत कोष

क्योंकि अल्पविकसित देशों में घरेलू करेंसी की तुलना में विदेशी मुद्रा का मूल्य अधिक होता है इसलिए देश की करेंसी के रूप में विदेशी करेंसी के बाजार मूल्य और वैधानिक मूल्य में बहुत अन्तर होता है। चैनरी इस अन्तर को r सामाजिक द्वारा व्यक्त करता है। शून्य r भुगतान शेष का सन्तुलन दिखाता है। धनात्मक r भुगतान शेष का घाटा दिखाता है तथा ऋणात्मक r भुगतान शेष का अतिरिक दिखाता है। इस प्रकार संशोधित फार्मूला यह होगा।

$$SMP = \frac{U-C}{K} + \frac{\alpha(\alpha\beta_1+\beta_2)}{K}$$

यहां पर – $\alpha\beta_1$= ऋणों की सेवाओं का भुगतान शेष पर वार्षिक प्रभाव है।

β_2= परियोजना के प्रचालन का भुगतान शेष पर वार्षिक प्रभाव है।

यदि V का मूल्य ऋणात्मक हो तो इसका अर्थ है आयात और यदि V का मूल्य धनात्मक है तो इसका अर्थ है निर्यात। संशोधित सूत्र इस प्रकार बनता है कि

$$SMP = \frac{V-C}{K} + \frac{\beta\alpha}{K}$$

इस सिद्धान्त के अनुसार साधनों का मूल्यांकन सामाजिक अवसर लागत के आधार पर किया जाता है। इस मापदण्ड की कुछ आलोचनाएं भी है।

1. सभी परियोजनाओं में पूंजी की सीमान्त उत्पादकता सभी प्रयोगों में एकदम बराबर नही हो सकती क्योंकि सभी परियोजनाओं में निवेश की मात्रा अलग होती हे।
2. यह मापदण्ड मानता है कि एक क्षेत्र में परिवर्तन दूसरे क्षेत्र मे।परिवर्तन नही करता। हकीकत यह है कि प्रत्येक आर्थिक क्रिया का दूसरे क्षेत्रों में प्रभाव पडता है।
3. सामाजिक सीमान्त उत्पादकता में वर्तमान और आने वाले समय में विभिन्न परियोजनाओं में लाभ और लागत का निर्धारण करना कठिन है। बाजार कीमत से कई बार गलत आबंटन हो सकता है। शिक्षा और स्वास्थ्य का बाजार मूल्य कम होता है। इस मापदण्ड में तकनीक को स्थिर माना गया है जबकि तकनीक में समय के साथ परिवर्तन होते रहते है।
4. इस मापदण्ड में निवेश का आय पर केवल एक बार प्रभाव देखता है। यह मापदण्ड गुणक प्रभाव की अवहेलना करता है। यह मापदण्ड आय के वितरण की भी अवहेलना करता है।
5. इस मापदण्ड में घटते प्रतिफल के नियम की मान्यता ली गई है। जबकि प्रतिफल समान और बढते हुए भी हो सकते है।
6. यह मापदण्ड लागत और लाभ का भी उचित रूप से मूल्यांकन नही कर पाता है। कई बार बाजार मूल्य साधनों के आबंटन की सही कसौटी नही होता है और जिससे की सामाजिक निवेश जैसे की शिक्षा, स्वास्थ्य, पार्क, जल आदि की सुविधाओं का मूल्यांकन करना कठिन हो जाता है।

3. पुननिर्वेश कसौटी

प्रो0 गलैन्सन तथा लीबेस्टीन द्वारा इस मानदण्ड का प्रतिपादन किया गया। इस मानदण्ड को कई अन्य नामों से भी जाना जाता है। इसको प्रति श्रमिक शुद्ध उत्पादकता में से प्रति श्रमिक उपभोग घटा कर प्राप्त किया जाता है।। गलैन्सन तथा लीबेन्स्टीन भविष्य में प्रति व्यक्ति उत्पादन को अधिकतम करने पर बल देते है। ऐसा करने के लिए बचतों को बढाना चाहिए ऐसा करने से आय का पुनर्निवेश होता हे। राष्ट्रीय आय के दो भाग होते है एक मजदूरी तथा दूसरा लाभ। अल्पविकसित देशों में मजदूरी निर्वाह स्तर की मिलती है इसलिए मजदूरी में से बचत करना सम्भव नही हो पाता परन्तु लाभ का एक बहुत बडा भाग बचत के लिए तैयार रहता है इसलिए जितने अधिक लाभ होगे उतनी ही बचत बढेगी और बचत बढने से निवेश के लिए पूंजी भी बढेगी और ऐसा करने से विकास की दर भी बढेगी। विकास के शुरूआती दौर से लाभो को बढाने के लिए और उपभोग को नियन्त्रित करने के लिए अल्पविकसित देशों की ओर से क्रान्तिक न्यूनतम प्रयत्न आवश्यक रहता है। ऐसा करने से बचते बढती है और बचते बढने से निवेश करने के लिए फंड बढ जाता है। जैसा कि हम जानते है कि प्रति व्यक्ति उत्पादन – पूंजी – श्रम अनुपात द्वारा निर्धारित होता है। निवेश की दर (r) निकालने का सूत्र इस प्रकार है।

$$r = \frac{P - ew}{C}$$

r = पुन– विनियोग दर

P = प्रति मशीन उत्पादन

e = प्रति मशीन श्रमिक

w = वास्तविक मजदूरी दर

c = प्रति मशीन लागत

r में वृद्धि करके के लिए प्रति व्यक्ति मशीन उत्पादन को बढाना होगा

मापदण्ड की आलोचना

1. प्रो0 ए0 के सेन ने बताया है कि यह मान्यता गलत है कि उपभोग की मात्रा स्थिर रहती है। क्योंकि अतिरिक्त रोजगार से एक देश का कुल उपभोग बढता है और रोजगार के परिणामस्वरूप उत्पादन में वृद्धि होगी तो पुनर्निवेश होने वाला अतिरेक घट जायेगा जिससे की राष्ट्रीय आय की वृद्धि दर कम हो जायेगी।
2. यह मान्यता भी गलत है कि मजदूरी में से बचत नही की जा सकती और लाभ की सारी मात्रा निवेश की जाती है क्योंकि यह आवश्यक नही है कि अल्पविकसित देशों में हमेशा जीवन निर्वाह स्तर की मजदूरी मिलती है और यह भी आवश्यक नही है कि लाभ की सारी मात्रा बचत की जाती है। क्योंकि जिनको ज्यादा लाभ मिलता है वो विलासिता के लिए भी खर्च कर सकते है।
3. यह मापदण्ड उपभोग वस्तुओं वाले उद्योगों की तुलना में पूंजीगत वस्तुओं के उद्योग में निवेश करने की वकालत करता है परन्तु डॉ0 ओटो एकस्टीन ने बताया है कि उपभोक्ता उद्योगों को यदि कम महत्व दिया गया तो वस्तुओं की दुर्लभता और मुद्रा स्फीति की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी।

4. सेन की काल श्रेणी कसौटी

सेन ने 1967 में काल श्रेणी की कसौटी प्रतिपादित की। इस कसौटी में निश्चित अवधि के दौरान उत्पाद को अधिकतम करने का प्रयत्न किया गया है क्योंकि आर्थिक विकास में समय का अपना अलग महत्व होता है। इसलिए

समय को आधार मानकर साधनों के आबंटन की तकनीक का चयन करना चाहिए। प्रो0 सेन ने बताया है कि अर्थव्यवस्था में श्रम प्रधान और पूंजी प्रधान तकनीक का प्रयोग होता है।

मापदण्ड की आलोचना

1. इस मापदण्ड में जो समय का निर्धारण किया गया है वह गणितीय दृष्टि से ठीक नही है।
2. काल श्रेणी का निर्माण करना भी एक मुश्किल कार्य है।

3.6 लागत लाभ विश्लेषण

परियोजना मूल्यांकन किसी भी देश की योजना प्रकिया का एक जरूरी अंग है। यह किसी भी परियोजना के विभिन्न पहलुओं जैसे लागत लाभ का विश्लेषण करता है। किसी भी परियोजना के व्यष्टि व समष्टि दोनो पक्ष होते है। परियोजना मूल्यांकन में उच्च स्तर के तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है। परियोजना मूल्यांकन और लागत लाभ विश्लेषण दोनो लगभग एक जैसी ही है। लागत लाभ विश्लेषण में किसी परियोजना के सारी अर्थव्यवस्था पर सामाजिक प्रभाव देखे जाते है। यह तकनीक केवल नई परियोजनाओं के लिए ही नही बल्कि पुरानी परियोजनाओं के विस्तार के लिए भी लागू की जाती है। साधनों के इष्टतम आबंटन के लिए परियोजना मूल्याकंन एक अच्छी तकनीक है। अल्पविकसित देशों के पास साधन दुर्लभ होते है। इसलिए इन साधनों का प्रयोग उस जगह किया जाता है जहां से उत्पादकता ज्यादा आती हो।

लागत लाभ विश्लेषण अधिक वैज्ञानिक कसौटी है। लागत लाभ विश्लेषण यह बताता है कि किसी भी परियोजना के प्रत्यक्ष लाभ और सामाजिक लाभ में अन्तर होता है। लागत लाभ विश्लेषण सामाजिक लागत और सामाजिक लाभ की बात करता है। लागत लाभ विश्लेषण में परियोजना की लागत और सम्भावित लाभों की तुलना की जाती है।

लागत लाभ विश्लेषण की कसौटिया

परियोजना का चयन लागत लाभ अनुपात पर निर्भर करता है। यदि अनुपात में लाभ अधिक है और लागत कम है तो परियोजना का चुनाव कर सकते है। ऐसा होने से परियोजना को आर्थिक माना जायेगा।

अगर $\frac{B}{C} = 1$ है तो परियोजना केवल अपनी लागत पूरी कर रही है। लागत और लाभ बराबर है।

अगर $\frac{B}{C} > 1$ हो तो लाभ लागत से अधिक है ऐसी स्थिति में परियोजना का चयन करना ठीक होता है।

अगर $\frac{B}{C} < 1$ हो तो लागत अधिक है और लाभ की मात्रा कम है। यह परियोजना को जारी रखने की स्थिति नही होगी।

जिस परियोजना का लाभ लागत अनुपात होगा। उस परियोजना को निवेश करने के लिए ज्यादा महत्व दिया जायेगा।

परन्तु इस विश्लेषण में समय को कोई महत्व नही दिया है। भविष्य में होने वाले लाभों और वर्तमान के लाभों की हम तुलना नही कर सकते है। यह कसौटी उचित नही है।

इसलिए हम निम्नलिखित 2 कसौटियों का अध्ययन करेगें।

1 वर्तमान मूल्य कसौटी

उस कसौटी में आगमन और लागत का वर्तमान का मूल्य निकाल लिया जाता है। उसमें बट्टा की सामाजिक दर से भविष्य के आगमन और लागत का वर्तमान मूल्य निकाल लिया जाता है।

$$\left[\frac{B_1}{1+i} + \frac{B_2}{(1+i)^2} + \cdots\cdots\frac{B_n}{(1+i)^n}\right] - \left[\frac{C_1}{(1+i)} + \frac{C_2}{(1+i)^2} + \cdots\frac{C_n}{(1+i)^n}\right]$$

यहां पर B आगम है और C लागत को दर्शाता है।

i यहां पर बट्टा की सामाजिक दर है।

किसी भी परियोजना का उस समय चुनाव किया जायेगा जब उपरोक्त आगम और लाभ के अन्तर का मूल्य शून्य से अधिक आयेगा। उसका मूल्य शून्य से जितना अधिक होगा उस परियोजना को उतना ही ज्यादा महत्व दिया जायेगा।

इस सूत्र की जगह पर हम आगम और लागत का अनुपात भी ले सकते है। आगम और लागत का अनुपात जब इकाई से अधिक होता है तो परियोजना का चयन कर लिया जाता है। जिस परियोजना का मूल्य जितना एक से अधिक होगा। उस परियोजना को चयन के लिए प्राथमिकता दी जायेगी।

2 प्रतिफल की आंतरिक दर कसौटी

प्रतिफल की आंतरिक दर वह दर है जिससे आगम और लागत को बराबर बना देती है।

$$\frac{B_1-C_1}{1+r} + \frac{B_2-C_2}{(1+r)^2} + \text{----------} \frac{B_n-C_n}{(1+r)^n} = 0$$

जिस परियोजना में r का मान जितना अधिक होगा। उसी परियोजना को प्राथमिकता दी जाएगी।

लाभों के प्रकार

किसी भी परियोजना का मूल्यांकन उनसे मिलने वाले लाभों के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार यहां पर हम विभिन्न प्रकार के लाभों का अध्ययन करेगें।

1 वास्तविक एवम् अवास्तविक लाभ

लागत लाभ विश्लेषण में हम वास्तविक लाभों का अध्ययन करते है। किसी परियोजना से अगर किसी विशेष वर्ग को लाभ हो रहा है तो यह वास्तविक लाभ होगा। परन्तु अगर सरकार उस विशेष लाभ पर अगर कर लगाती है तो वह लाभ गौण हो जायेगा। जोकि नाममात्र या अवास्तविक लाभ बचेगा।

2 मुख्य एवम् गौण लाभ

जिस काम के लिए परियोजना शुरू की गई थे वे सभी लाभ मुख्य होगें। लेकिन परियोजना से मिलने वाले लाभ अनेक हो सकते है। इसलिए एक उद्देश्य के अलावा जो अन्य लाभ किसी परियोजना से मिलते है वे गौण लाभ होते है।

3 भौतिक एवम् अभौतिक लाभ

किसी भी परियोजना से भौतिक एवम् अभौतिक दोनों प्रकार के लाभ मिल सकते है। जिन लाभो को मुद्रा के रूप में मापा जा सकता वो भौतिक लाभ होते है। जबकि जिन लाभों को मुद्रा के रूप में नही मापा जा सकता है। वे सभी अभौतिक लाभ होते है।

लागतों के प्रकार

जैसे लाभ के कई प्रकार होते है उसी प्रकार लागत के भी कई प्रकार होते है।

1 वास्तविक एवम् अवास्तविक लागत

यदि किसी परियोजना के लिए धनराशि कर के रूप में वहां के नागरिकों से इकटठी की जाती है तो यह वास्तविक लागत होगी और अगर वहां के निवासियों से श्रम दान कराया जाता है तो वह अवास्तविक लागत होगी।

2 मुख्य एवम् सहायक लागत

किसी परियोजना में निर्माण और संचालन के लिए जो धन व्यय किया जाता है वह मुख्य लागत होता है परन्तु जब श्रमिकों को विभिन्न प्रकार की सुविधाओं को देने मे।खर्च आता है तो यह सहायक लागत होगी। किसी भी परियोजना के लिए लागत लाभ विश्लेषण बहुत ही जरूरी होता है। लागत लाभ विश्लेषण में विशेष ज्ञान की जरूरत पडती है। यह काम बडा जटिल काम है।

3.7 सारांश

केन्जीयन अर्थशास्त्री आर्थिक विकास में राजकोषीय नीति की भूमिका पर बल देते है और क्लासिकल अर्थशास्त्री भौतिक नीति की भूमिका पर बल देते है। जबकी आधुनिक अर्थशास्त्री भौतिक और राजकोषीय दोनों प्रकार की नीतियों पर बल देते है। उसी तरह से अल्प विकसित देशों को यह चुनाव करना पडता है। कि वह श्रम प्रधान तकनीक का चुनाव करे या पूंजी प्रधान तकनीक का।

3.8 मुख्य शब्दावली

- **मौद्रिक नीति** – मौदिक नीति से अभिप्राय रिजर्व बैक की उस नीति से होता है जिसके द्वारा मुद्रा की मांग और मुद्रा की पूर्ति पर नियन्त्रण से होता है।
- **राजकोषीय नीति** – राजकोषीय नीति से अभिप्राय सरकार की आय, व्यय तथा ऋण से सम्बन्धित नीतियों से है।
- **तकनीक का चुनाव** – अल्पविकसित देशों में मुख्य समस्या यह होती है जो साधन उपलब्ध है उनका किस प्रकार से उपयोग किया जाये ताकि विकास दर को अधिकतम किया जा सके।
- **श्रम प्रधान तकनीक** – श्रम प्रधान तकनीक से अभिप्राय है कि तुलनात्मक रूप से श्रम की अधिक मात्रा के साथ पूंजी की कम मात्रा का प्रयोग किया जाता है।
- **पूंजी प्रधान तकनीक** – पूंजी प्रधान तकनीक से अभिप्राय है कि तुलनात्मक रूप से पूंजी की अधिक मात्रा के साथ श्रम की कम मात्रा का प्रयोग किया जाता है।
- **पूंजी उत्पाद अनुपात मापदण्ड** – इस मापदण्ड का उद्देश्य पूंजी की एक इकाई से अधिकतम उत्पाद प्राप्त करने का होता है।
- **सामाजिक सीमान्त उत्पादकता मापदण्ड** – इस मापदण्ड में विभिन्न क्षेत्रों और उद्योगों मे।निवेश का आबंटन इस प्रकार हो कि विभिन्न परियोजनाओं में निवेशीत पूंजी की सीमांत उत्पादकता समान हो जाए।
- **पुनर्निवेश कसौटी** – इसको प्रति श्रमिक शुद्ध उत्पादकता में से प्रति श्रमिक उपभोग घटाकर प्राप्त किया जाता है।
- **सेन की कालश्रेणी कसौटी** – इस कसौटी में निश्चित अवधी के दौरान उत्पादन को अधिकतम करने का प्रयत्न किया जाता है क्योंकि आर्थिक विकास में समय का अपना अलग महत्व होता है।
- **वर्तमान मूल्य कसौटी** – इस कसौटी में आगम और लागत का वर्तमान मूल्य निकला लिया जाता है। इसमें बट्टा की सामाजिक दर से भविष्य के आगम और लागत का वर्तमान मूल्य निकाल लिया जाता है।

- **प्रतिफल की आन्तरिक दर कसौटी** – प्रतिफल की आन्तरिक दर वह दर है जिससे आगम और लागत को बराबर बना देती है।

3.9 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

1 श्रम प्रधान तकनीक में ..... की अधिकता पाई जाती है।
2 पूंजी प्रधान तकनीक मे ..... की अधिकता पाई जाती है।
3 पूंजी – उत्पाद अनुपात मापदण्ड का प्रतिपादन ..... ने किया।
4 सामाजिक सीमान्त उपादकता मादण्ड का प्रतिपादन ..... ने किया।
5 पुननिर्वेश कसौटी को ..... द्वारा प्रतिपादित किया गया।
6 $\gamma = \frac{P - e(-)}{c}$
7 काल श्रेणी कसौटी ..... द्वारा प्रतिपादित की गई।
8 जब B/C>1 हो तो लाभ, लागत से अधिक है, ऐसी स्थिति में परियोजना का चयन करना ..... होता है।
9 जब B/C<1 हो तो लागत, लाभ से अधिक है, ऐसी स्थिति में परियोजना का चयन करना ..... होता है।
10 जब B/C=1 हो तो लागत, लाभ आपस में बराबर है तो परियोजना अपनी लागत ..... कर रही है।

3.10 अपनी प्रगति जानिएं के उत्तर

1 श्रम की
2 पूंजी की
3 एन0एस0 बुयानन
4 के0 ई0 काहन
5 गैलेन्सन तथा लीबेन्स्टीन
6 w
7 सेन
8 ठीक
9 गलत
10 पूरी

3.11 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु – उत्तरीय प्रश्न

1 मौद्रिक नीति क्या है ?
2 राजकोषीय नीति क्या है ?
3 श्रम प्रधान तकनीक से क्या अभिप्राय है?
4 पूंजी प्रधान तकनीक से क्या अभिप्राय है ?
5 निवश कसौटी क्या है ?
6 पूंजी उत्पाद अनुपात क्या है ?
7 सामाजिक सीमान्त उत्पादकता मापदण्ड क्या है ?
8 सेन की काल श्रेणी कसौटी क्या है ?
9 वर्तमान मूल्य कसौटी से आप क्या जानते है ?

10 प्रतिफल की आन्तरिक दर कसौटी क्या है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 मौद्रिक नीति से क्या अभिप्राय है ? आर्थिक विकास में मौद्रिक नीति के योगदान की व्याख्या करे ?
2 राजकोषीय नीति से क्या अभिप्राय है ? राजकोषीय नीति के आर्थिक विकास में योगदान की व्याख्या करे ?
3 तकनीक का चुनाव क्या है ? श्रम प्रधान बनाम पूंजी प्रधान तकनीक के पक्ष और विपक्ष में तर्क की व्याख्या करे ?
4 निवेश कसौटी क्या है ? निवेश की विभिन्न कसौटियों की भूमिका को विस्तार से बताइए।
5 लागत – लाभ विश्लेषण क्या है ? लागत – लाभ विश्लेषण की विस्तार से व्याख्या करे।

3.12 आप ये भी पढ़ सकते है एवम् सन्दर्भ सूची

- Ahuja, H.L. (2017). Development Economics (Ist Edition). New Delhi S. Chand & Company Pvt. Ltd.
- Jhingan, M.L. (2004). The Economics of DevelopmentAnd Planning (4 th edition). New Delhi : Vrinda publication Pvt. Ltd. Hindi medium
- Puri, V.K. & Mishra, S.K. (2019). Indian Economy (37th edition). Mumbai : Himalaya Publishing House Pvt. Ltd.
- Mishra, S.K. & Puri, V.K. (2006). Economics of DevelopmentAnd Planning (12th edition). Mumbai : Himalya Publisnig House
- Singh, S.P. (2007). Economic DevelopmentAnd Planing (21st Edition). New Delhi : S.Chand & Company Ltd. (Hindi Medium)
- Todaro, M.P. & Smith, S.C. (2012). Economic Development (11th Edition). Boston :Addision - Wesley
- Thirlwal,A.P. (2006). Growth & Development (8th Edition). Palgrave Macmillan. Hampsnire
- Taneja, M.L. & Myer, R.M. (2014). Economics of Development & Planning (2nd Edition). Jalandhar. Vishal Publishing Co. (Hindi Medium)

इकाई – 4

इकाई की रूपरेखा

4.0 परिचय

4.1 इकाई के उद्देश्य

4.2 आर्थिक आयोजन

4.3 आयोजन के प्रकार

4.4 योजना मॉडल

4.5 भारत में योजना माडल

4.6 बाजार – निर्देशित अर्थव्यवस्था में योजना

4.7 अर्न्तजात वृद्धि

4.8 शिक्षा, अनुसंधान और ज्ञान की भूमिका – विभिन्न देशों के वृद्धि और विकास के अन्तर के रूप में

4.9 सारांश

4.10 मुख्य शब्दावली

4.11 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

4.12 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

4.13 अभ्यास हेतु प्रश्न

4.14 आप ये भी पढ सकते है।

4.0 परिचय

हम जानते है कि अल्पविकसित देशों में संसाधनों की दुर्लभता होती है। जबकि अल्पविकसित के सामने गरीब, असमानता और बेरोजगारी जैसी समस्याएं है। अल्पविकसित देश विकास की दर को जीवन स्तर को बढाने का साधन मानते है। आयोजन का उद्देश्य पूंजी निर्माण में वृद्धि करने का होता है। क्योंकि पूंजी निर्माण बढाने में काफी कठिनाईया आती है परन्तु पूंजी निर्माण बढाना आवश्यक होता है। क्योंकि पूंजी निर्माण बढने से उपलब्ध साधनों की उत्पादकता बढ जाती है। कम पूंजी निर्माण से गरीबी का दुष्चक्र नही टुटता है। आर्थिक आयोजन करने से बेरोजगारी को भी दूर किया जा सकता है। क्योंकि अल्पविकसित देशों में पूंजी की मात्रा कम होती है।जबकि श्रम की मात्रा अधिक होती है। अल्पविकसित देशों में प्रछन्न बेरोजगारी भी पाई जाती है। प्रछन्न बेरोजगारी होने से कुछ श्रम की सीमान्त उत्पादकता शून्य हो जाती है। इसलिए अल्पविकसित देशों की सरकार को बेरोजगारी दूर करने के लिए योजना बनाना आवश्यक हो जाता है। अल्पविकसित देशों में आधारभूत संरचना का विकास कम होता है। इसलिए आधारभूत सरंचना की कमी से अन्य क्षेत्रों के विकास में भी कमी आती है। इसलिए योजना बनाकर आधारभूत संरचना का विकास किया जाता है।

4.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के निम्नलिखित उद्देश्य है।

- योजना की तकनीक का अध्ययन करना।
- भारत में योजना माडल का अध्ययन करना
- बाजार – निर्देशित अर्थव्यवस्था में आयोजना का अध्ययन करना
- शिक्षा, अनुसंघान और ज्ञान की भूमिका का अध्ययन करना।

4.2 आर्थिक आयोजन

मनुष्य सदैव परिवर्तन चाहता है। वह अपने जीवन स्तर को ऊंचा उठाने के लिए लगातार प्रयत्न करता रहता है। हम जानते है कि मानव शुरूआती दौर में जंगलों में रहता है परन्तु उसने परिस्थितयों अपने अनुकूल बना लिया। धीरे – धीरे मनुष्य में जागृति उत्पन्न हुई। इस क्रम में व्यक्तिवाद से समाज को उत्पन्न किया। इस प्रकार मनुष्य के सामने आर्थिक समस्या उत्पन्न होने लगी। अलग – अलग तरह की व्यवस्था जन्म लेने लगी जैसे कि सामन्तवाद, पूंजीवाद आदि। एक व्यवस्था खत्म होकर दीर्घकाल में दूसरी व्यवस्था जन्म लेने लगी। एक राष्ट्र के सम्बन्ध दूसरे देशों से भी बढने लगे थे। इसके बाद वस्तु विनिमय प्रणाली से मुद्रा अर्थव्यवस्था की तरफ आ गए। मुद्रा के प्रयोग ने अर्थव्यवस्था की कार्यप्रणाली को सरल बना दिया। परन्तु इससे दो तरह की अर्थव्यवस्थाओं का जन्म हुआ उनमें एक तो विकसित अर्थव्यवस्था है और दूसरी अल्पविकसित अर्थव्यवस्था है।

ज्यादातर अल्पविकसित देशों ने अपनी समस्याओं को दूर करने के लिए आर्थिक नियोजन का रास्ता अपनाना उचित समझा। आर्थिक नियोजन में साधनों का सुनियोजित ढंग से प्रयोग किया जाता है। ऐसा करने से अल्पविकसित देश अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेते हे। आर्थिक नियोजन एक ऐसी तकनीक है जिससे कि वांछित लक्ष्य पूरे किए जाते है। प्रो0 एल0 राबिन्स के अनुसार, '' नियोजन से अभिप्राय उत्पादन पर किसी भी प्रकार का लगाया गया, राजकीय नियन्त्रण है।'' राष्ट्रीय नियोजन समिति के अनुसार, '' आर्थिक नियोजन उपभोग, उत्पादन, विनियोग, व्यापार तथा राष्ट्रीय लाभांश के वितरण से सम्बन्धित स्वार्थ – रहित विशेषज्ञों का तकनीकी समन्वय है। जो राष्ट्र की प्रतिनिधी संस्थाओं द्वारा निर्धारित विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति हेतू प्राप्त किया जाए। ''

आर्थिक नियोजन की विशेषताएं

1 नियोजन विकास की समन्वित प्रणाली है।
2 उद्देश्य पूर्व निर्धारित होने चाहिए।
3 नियोजन में जनता का सहयोग आवश्यक होता है।
4 नियोजन में लक्ष्य की प्राप्ति एक निश्चित अवधि में होती है।
5 आर्थिक नियोजन में अधिकतम सामाजिक लाभ को प्राप्त करने के लिए साधनों का विवेकपूर्ण प्रयोग होना आवश्यक है।
6 आर्थिक नियोजन का संचालन कुशल केन्द्रीय आयोजन सत्ता द्वारा किया जाता है।

जैसा कि हमने पढा है कि किसी भी नियोजन के निश्चित लक्ष्य होते है। आयोजन के राजनीतिक लक्ष्य के साथ आर्थिक लक्ष्य भी होते है। आर्थिक नियोजन के निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते है।

1 आय की समानता

अल्पविकसित देशों में आय की असमानता बढती जा रही है। पूंजीवाद में आय की असमानता और भी प्रबल होती रहती है। आय का पुनर्वितरण करने से लोगों का जीवन स्तर ऊंचा उठता है। आय का पुनर्वितरण करने

के लिए सरकार करारोपण की नीति अपनाती है। लोगों को इसका फायदा पहुंचाने के लिए सरकार खर्च करती है।

2 अवसर की समानता

अवसर की समानता में राष्ट्र की जनसंख्या को काम करने के समान अवसर मिलने के लिए सरकार प्रयत्न करती है। इसके लिए यह आवश्यक है कि लोगों को शिक्षण, प्रशिक्षण के समान अवसर दिए जाये।

3 आर्थिक विकास

अल्पविकसित देश में कम उत्पादन और उत्पादकता के कारण लोगो की न्युनतम जरूरते पूरी नही हो पाती है इसलिए आर्थिक नियोजन का एक उद्देश्य आर्थिक विकास का भी होता है।

4 कृषि का आधुनिकरण

विकासशील देश में कृषि की प्रधानता होने के कारण भी गरीबी होती है। क्योंकि उत्पादकता का स्तर निम्न होता है। इसलिए सरकार को कृषि की उत्पादकता बढाने के लिए आधुनिकरण करने की तीव्र आवश्यकता है।

5 तीव्र औद्योगीकरण

आर्थिक विकास की पूर्व आवश्यकता औद्योगीकरण की हे। औद्योगीकरण रोजगार के स्तर को बढा देता है। जिससे की लोगों की आय बढ जाती है। लोगों की आय बढने से लोगों का जीवन स्तर बढ जाता है।

6 रोजगार

हम जानते है कि अल्पविकसित देशों में बडे स्तर पर बेरोजगारी और गरीबी पाई जाती है। बेरोजगारी और गरीबी से लोगों का जीवन स्तर गिर जाता हे। इसलिए आयोजन का उद्देश्य रोजगार को बढाने का है।

7 असमानता को कम करना

अल्पविकसित देशों में समाज के वर्गो में आय और धन की असमानता होती है। यह असमानता सामाजिक और राजनीतिक अस्थिरता पैदा कर देती है। परन्तु आर्थिक नियोजन से आय की असमानता कम हो जाती है।

8 संतुलित विकास

अल्पविकसित देश में सभी क्षेत्र पिछडे नही होते है। हकीकत यह है कि अल्पविकसित देश में विभिन्न क्षेत्रों के विकास में असमानता मिलती है। आर्थिक नियोजन का एक उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रों का संतुलित विकास करने का होता है।

9 स्फीति पर नियन्त्रण

अल्पविकसित देशों में कई बार पूर्ति कम होने की वजह से कीमते बढने लगती है। अगर कीमतों को बढने से न रोका जाए तो आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पडते है। आर्थिक आयोजन का एक उद्देश्य कीमतों पर नियन्त्रण लगाने का भी होता है।

हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है की विकसित देशों को आर्थिक नियोजन की कम चुनौतियों का सामना करना पडता है जबकि अल्पविकसित देशों को ज्यादा समस्याओं का सामना करना पडता है। अल्पविकसित देशों को अपनी समस्याओं का समाधान करने के लिए आर्थिक नियोजन की आवश्यकता पडती है।

4.3 आयोजन के प्रकार

आयोजन कई प्रकार का हो सकता है। आर्थिक प्रणाली के अनुसार आयोजन का प्रकार बदल जाता है। आयोजन अल्पकाल और दीर्घकाल के लिए अलग – अलग हो सकता है। आयोजन भौतिक या वित्तीय भी हो सकता है।

1. प्रोत्साहन और निदेशन द्वारा नियोजन

(A) **प्रोत्साहन द्वारा नियोजन –** इस आयोजन में सरकार कीमत नियंत्रण और वित्तीय नीतियों द्वारा लोगों को प्रोत्साहन देती है। उसमें नियोजन के लक्ष्यों को सरकार लोगों के सहयोग द्वारा प्राप्त करते है। परन्तु जब प्रोत्साहन उपभोक्ता द्वारा पर्याप्त न हो तो लक्ष्यों को प्राप्त करना कठिन हो जाता है।

(B) **निदेशन द्वारा आयोजन** – इस आयोजन में सरकार का पूर्ण नियंत्रण होता है। इस आयोजन में सरकार कीमत नियंत्रण, आयात – निर्यात आदि पर नियंत्रण करती है। परन्तु इसमें उपभोक्ता की स्वतन्त्रता खत्म हो जाती है।

2. वित्तीय तथा भौतिक आयोजन

(A) **वित्तीय आयोजन** – आर्थिक विकास की पहली शर्त वित्त व्यवस्था का होना है। अगर वित्त व्यवस्था उचित नही हो तो लक्ष्यों को प्राप्त करना मुश्किल हो जाता है।

(B) **भौतिक आयोजन** – नैतिक आयोजन में देश मे।उपलब्ध श्रम – शक्ति, प्राकृतिक साधन तथा अन्य आवश्यक साधन आते हे। भौतिक आयोजन करते समय श्रम, भूमि, पूंजी, उत्पादन के साधनों को ध्यान मे।रखा जाता है।

3. दृष्ट आयोजन तथा वार्षिक आयोजन

दृष्ट आयोजन का सम्बन्ध दीर्घकाल से है और वार्षिक आयोजन का सम्बन्ध अल्पकाल से है। परन्तु दृष्ट आयोजन 20, 25 और 30 वर्षो की योजना है। परन्तु दृष्ट योजना को पूरा करने के लिए छोटी योजनाएं बनानी पडती है जैसे की पंचवर्षीय योजना। इस प्रकार दृष्ट योजनाओं को पूरा करने के लिए पंचवर्षीय योजनाएं बनाई जाती है। परन्तु पंचवर्षीय योजनाओं को पूरा करने के लिए भी एक – एक साल की योजनाएं बनानी पडती है। जिन्हें हम वार्षिक योजना कहते है। वार्षिक योजना दृष्ट योजना को पूरा करने के लिए बनाई जाती है।

4. सांकेतिक तथा आदेशात्मक आयोजन

सांकेतिक आयोजन में लोचशीलता होती है। परन्तु आदेशात्मक आयोजन में सारे निर्णय आदेश के रूप में होते है। इसमें कोई लोचशीलता नही होती है। इनका पालन लोगो।और संस्थाओं द्वारा आवश्यक रूप से करना होता है। यह आयोजन समाजवादी देशों में अधिकतर पाई जाती है। अगर एक क्षेत्र में कोई समस्या आती है तो पूरी अर्थव्यवस्था में यह फैल जाती है। सांकेतिक आयोजन फ्रांस में प्रचलित है।

5. लोकतंत्रीय तथा सर्वाधिकारवादी आयोजन

लोकतंत्रीय आयोजन लोकतंत्रीय देश मे।चलाया जाता है। इस आयोजन में लोचशीलता पाई जाती है। सर्वाधिकारी आयोजन में केन्द्रीय नियंत्रण होता है। इसमें लोचशीलता नही पाई जाती है। यहां आयोजन निदेशन से चलता है। यह आयोजन केन्द्रीयकृत होता है। इस योजना में लोगों का जोडना आवश्यक नही होता है। जबकि लोकतंत्रीय आयोजन में लोगों को योजना से जोडना आवश्यक हो जाता है। इसमे।विकेन्द्रीकृत आयोजन पाया जाता है।

4.4 योजना माडल

किसी भी योजना के वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कुछ चरों में आपसी सम्बन्धों को दिखाने के लिए और कुछ मान्यताओं को माना जाता है। जिन्हे हम योजना मॉडल कहते है। एक मॉडल में विभिन्न आर्थिक चरों में सम्बन्ध को बताया जाता है। एक मॉडल में विभिन्न समीकरण शामिल होते है।। एक समीकरण में अन्तर्जात और बहिर्जात चर होते है। एक मॉडल में उद्देश्यों का एक समूह लेकर चला जाता है। मॉडल में चरों का एक समूह होता है जिसमें की स्थिरांक और प्राचल शामिल होते है इनके साथ कुछ मान्यताएं भी शामिल होती है।

4.5 भारत में योजना मॉडल

योजना मॉडल अर्थव्यवस्था में विभिन्न चरों के बीच सम्बन्ध को बताता है। यह योजना मॉडल देश का आयोजन करने के लिए आवश्यक होता है। क्योंकि अर्थव्यवस्था में एक चर का प्रभाव दूसरे चर पर प्रभाव देखा जाता है। प्रत्येक योजना किसी ना किसी मॉडल पर आधारित होती है। जैसे की पहली योजना हैराड – डोमार मॉडल पर आधारित थी और दूसरी योजना महालनोबिस मॉडल पर आधारित है। अब हम प्रत्येक योजना मॉडल का अध्ययन करेगें।

प्रथम योजना का मॉडल –

पहली पंचवर्षीय योजना हैरोड – डोमार के मॉडल पर आधारित थी। जैसा कि हम जानते है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना सन् 1951 में शुरू हुई थी। पहली योजना का कार्यकाल 1 अप्रैल 1951 से शुरू होकर 31 मार्च 1956 को खत्म होता है।। यह योजना 1 अप्रैल 1951 से लागू तो है परन्तु इसको अन्तिम रूप दिसम्बर 1952 में दिया गया था। पहली योजना में देश के सामने कई समस्याएं खडी हो गई थी। पहली योजना में खर्च करने का लक्ष्य तो 2378 करोड रूपये था परन्तु वास्तविक व्यय 1960 करोड रूपये था। पहली पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य देश –: विभाजन के बाद उत्पन्न असन्तुलनों को दूर करना था। जैसा की हम जानते है की हैराड डोमर मॉडल को पहली पंचवर्षीय योजना का आधार माना गया था।

$$\frac{\Delta I}{I} = \alpha\sigma$$

उपरोक्त समीकरण वृद्धि दर को बताती है। यहां पर σ निवेश की संभावित सामाजिक उत्पादकता को बताती है। और α सीमान्त बचत प्रवृत्ति को बताता है। यह मॉडल निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित था।

1. औसत बचत प्रवृति से ज्यादा सीमान्त बचत प्रवृत्ति होती है।
2. अर्थव्यवस्था बन्द है।
3. कीमते स्थिर है।
4. सीमान्त पूंजी – उत्पाद अनुपात तथा औसत पूंजी उत्पाद का मान एक जैसा है।

पहली पंचवर्षीय योजना में निवेश की दर को 5 प्रतिशत माना गया था और पूंजी – उत्पाद अनुपात का मूल्य 3:1 माना गया था। जबकि α का मूल्य 20 प्रतिशत माना गया था।

दूसरी योजना का मॉडल

दूसरी योजना का कार्यकाल 1 अप्रैल सन् 1956 से 31 मार्च सन् 1961 के बीच का रहा है। यह योजना मूल रूप से प्रो0 पी0 सी0 महालनोबिस के द्वारा तैयार की गई थी। यह योजना महालनोबिस के विकास मॉडल पर आधारित थी। इस योजना में आर्थिक विकास के लक्ष्य को तीव्र औद्योगीकरण के द्वारा प्राप्त करने की बात की गई थी। द्वितीय योजना में रोजगार के अवसरों में वृद्वि करना और आर्थिक असमानता को दूर करने का भी लक्ष्य था। महालनोबिस ने चार क्षेत्रीय मॉडल का प्रयोग किया है। महालनोबिस की रणनीति यह थी कि भारी उद्योगों में निवेश बढाया जाए। लोगों की क्रय शक्ति को बढाया जाए जिससे की नई मांग का निर्माण होगा। परन्तु साथ में नई मांग को पूरा करने के लिए उपभोक्ता वस्तुओं की पूर्ति पर भी ध्यान देना चाहिए। अर्थव्यवस्था में तकनीकी क्षमता को भी बढाना चाहिए। ऐसा करने से उत्पादकता भी बढत है। पहली योजना में वास्तविक सीमान्त पूंजी – उत्पाद अनुपात 1.8:1 माना गया था जबकि दूसरी पंचवर्षीय योजना में वास्तविक सीमान्त पूंजी – उत्पाद अनुपात 2. 3:1 माना गया था। निवेश गुणक को 7 प्रतिशत माना गया था।

तृतीय योजना का मॉडल

तीसरी योजना मलनोविस के चार क्षेत्रीय मॉडल और सुखमय चक्रवर्ती के आगम निर्गम मॉडल पर आधारित थी। इस योजना मॉडल में कृर्षि एवम् उद्योग और विभिन्न क्षेत्रों की परस्पर निर्भरता को माना गया है। तीसरी योजना में जनसंख्या वृद्धि दर को 2 प्रतिशत वार्षिक माना गया है। सीमान्त पूंजी – उत्पाद अनुपात 2.3:1 लिया गया है। निवेश गुणक को 1960–61 मे 11 प्रतिशत माना गया था। तीसरी योजना का लक्ष्य स्वाबलम्बी और स्वयं – स्फूर्ति अर्थव्यवस्था का रखा गया था। राष्ट्रीय आय में वृद्धि 5 प्रतिशत का रखा गया। परन्तु तीसरी योजना अपने निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने में सफल नही हो सकी। क्योंकि इस योजना मे।चीन और पाकिस्तान के साथ युद्ध का भी प्रभाव पडता है। इसी तरह खाद्यान्न का उत्पादन भी केवल 6 प्रतिशत के लक्ष्य के विपरित केवल 2 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना

यह योजना 1 अप्रैल 1966 से प्रारम्भ होनी थी। परन्तु युद्ध जैसी परिस्थितियां पैदा होने के बाद योजना का शुरू करना सम्भव नही हो सका। ऐसा होने से साधनों की दुर्लभता की स्थिति पैदा हो गई थी । इसलिए पंचवर्षीय योजना की तीन एक वर्षीय योजनाएं चलाई गई थी। उस प्रकार चौथी योजना का कार्यकाल 1 अप्रैल 1969 से 31 मार्च 1974 तक रहा था। चौथी योजना में स्थिरता के साथ विकास और आत्मनिर्भरता की प्राप्ति का लक्ष्य रहा था। इस योजना मे एलन एस मन्ने और अशोक रूद्र द्वारा तैयार किया संगति मॉडल का प्रयोग किया। यह मॉडल लियोनटिफ के परम्परागत अन्तः उद्योग 'खुली' अर्थव्यवस्था पर आधारित था। उसमें विकास की गाडगिल रणनीति का प्रयोग हुआ था। विकास की गाडगिल रणनीति जो मुख्यता कृषि रणनीति इससे सम्बन्धित जिसमें उन क्षेत्रों के सम्बन्ध में बल दिया गया जिनमें उत्पादन बढाने की क्षमता निहित थी। इस योजनाकाल में 14 बैंको का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया था। इस योजना में राष्ट्रीय आय को 5.5 प्रतिशत की विकास दर को प्राप्त करने का था। ऐसा होने से रोजगार के अवसर बढने थे। इस योजना में सामान्य कीमत स्तर और खाद्यान्नों की कीमतों में स्थिरता लाने के अनेक प्रयत्न किए गए। हरित क्रान्ति पर भी अधिक बल दिया गया। इस योजनाकाल मे।खाद्यान्न आयात पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया गया। 1980–81 तक विदेशी सहायता पर निर्धनता समाप्त करने का लक्ष्य रखा गया। उस योजना में जनसंख्या के लिए रोजगार के सुवसर पैदा करने का भी लक्ष्य रखा गया था।

पांचवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का कार्यकाल 1 अप्रैल 1974 से 31 मार्च 1979 तक रहना था। लेकिन जनता सरकार ने कार्यभार सम्भालने के बाद कार्यकाल एक वर्ष कम कर दिया। इस प्रकार यह योजना 1979 की जगह 1978 में ही खत्म हो गई। यह योजना चौथी योजना की तरह आगम – निर्गत मॉडल पर ही आधारित थी। परन्तु चौथी योजना में केवल 30 क्षेत्र लिए थे जबकि पांचवी योजना में 66 क्षेत्र लिए गए थे। पांचवी योजना के दो मुख्य लक्ष्य रखे गए थे एक तो गरीबी दूर करने का और दूसरा आत्म निर्भरता प्राप्त करने का। पांचवी पंचवर्षीय योजना में GDP की 5. 5 प्रतिशत वृद्धि दर का लक्ष्य रखा गया था। इस योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम जिसमें प्राथमिक शिक्षा, पेयजल, ग्रामीण सडक, ग्रामीण विद्युतीकरण आदि का भी लक्ष्य रखा गया था। इस योजना में पहली बार निर्धन वर्ग की न्युनतम आवश्यकता को पूरा करने के लिए कार्यक्रम चलाए गए थे। इस योजना में पहली बार निर्धन वर्ग की न्युनतम आवश्यकता को पूरा करने के लिए कार्यक्रम चलाए गए थे। इस योजना में तकनीकी रूप से अधिक श्रेष्ठ काम किया। इस योजना के प्रारूप को तैयार करते समय योजना आयोग के सदस्य अर्थशास्त्री भी थी। इस योजना में भारी उद्योगों पर बल देकर नेहरूवादी दर्शन की थी वापसी की थी। इस योजना में जन सहयोग को भी गतिशील करने का था।

छठी योजना

छठी योजना का कार्यकाल सन् 1980 से सन् 1985 के बीच का रहा है। यह मॉडल भी पांचवी योजना के मॉडल पर आधारित रहा था। परन्तु इसमें आगत – निर्गत माडल में 89 क्षेत्र लिए गए थे। इस योजना का निर्माण 1980 – 81 से 1994 – 95 तक की 15 वर्ष की दृष्ट अवधि में तैयार किया गया था। इस योजना में पहली बार आधुनिकीकरण का लक्ष्य अपनाया गया था। इस योजना में कृषि का उत्पादन लक्ष्य से भी आगे रहा था। यह स्थिति पहली योजना के बाद आई है जब उत्पादन लक्ष्य से भी ज्यादा रहा है। परन्तु इस योजना में औद्योगिक क्षेत्र का उत्पादन निराशाजनक रहा था। इसमें आधारभूत उद्योगों का उत्पादन लक्ष्य से पीछे रहा है। उनके पीछ संचालन शक्ति की कमी और स्थापित क्षमता का अल्प उपयोग होना रहा है। यह योजना रोजगार के लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रही है। बहुत सारी रोजगार योजनाएं चलाई गई थी।

सातवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का ड्राफ्त 9 नवम्बर 1985 को NDC द्वारा स्वीकृत किया गया था। सातवी पंचवर्षीय योजना की शुरूआत दशाएं काफी अनुकूल रही है। छठी योजना में परिस्थितयां काफी प्रतिकूल रही थी। इसमें पहली बार दीर्घकालन विकास रणनीति पर बल देते हुए उदारीकरण पर बल दिया गया था। यह योजना मजदूरी वस्तु मॉडल पर आधारित थी। इस योजना में तीव्र विकास, आधुनिकीकरण, आत्मनिर्भरता और सामाजिक न्याय को लक्ष्य माना गया था। इस योजना में सामान्य रोजगार के विपरीत उत्पादक रोजगार पर ज्यादा ध्यान दिया गया। सातवी योजना मे।गरीबी, बेरोजगारी और क्षेत्रीय असन्तुलन को दूर करने का संकल्प लिया गया था। सातवी योजना में खाद्यान्न उत्पादन बढाने पर भी जोर दिया गया ताकि अर्थव्यवस्था में मंहगाई ज्यादा ना बढे सके। रोजी, रोटी और उत्पादकता पर ध्यान केन्द्रित किया गया था। वृद्धि दर की दृष्टि से यह योजना सफल रही है। 1985 – 90 में 5 प्रतिशत की वृद्धि का लक्ष्य 5 प्रतिशत था और प्राप्ति 5.8 प्रतिशत की रही है।

आठवी योजना

यह योजना जॉन डब्ल्यू मॉडल पर आधारित थी। इसमें 5.6 प्रतिशत के लक्ष्य के स्थान पर 6.68 की वृद्धि दर प्राप्त की गई। आठवी योजना मे।इस शताब्दी के अन्त तक पूर्ण रोजगार प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया था। खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता के साथ निर्यात हेतू खाद्यान्नों का सरप्लस तैयार करने का भी लक्ष्य था। आठवी योजना एक दिशापरक योजना थी। जैसा कि हम जानते है कि इस दशक में नए आर्थिक सुधारों की शुरूआत हुई थी। इस योजना में मानव विकास को सबसे जरूरी माना गया था। क्योंकि मानव विकास से उपलब्ध साधनों की उत्पादकता बढ जाती है।

नवीं योजना

नवी योजना की समयावधि अप्रैल 1997 से मार्च 2002 तक की रही है। इस योजना में मानव विकास पर ज्यादा जोर दिया गया था। यह योजना आगत निर्गत मॉडल पर आधारित थी। सामाजिक न्याय और समता का लक्ष्य आर्थिक विकास के साथ प्राप्त करने का भी लक्ष्य रखा गया था। इस योजना में भी निर्देशात्मक योजना पर बल दिया गया था।

दसवी योजना

यह योजना भी आगत निर्गत मॉडल पर आधारित थी। परन्तु इनमें कुछ संशोधन भी किया गया था। 8 प्रतिशत की वृद्धि दर का लक्ष्य रखा गया थ। सर्वाधिक व्यय ऊर्जा क्षेत्र पर करने का लक्ष्य था।

ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का वृद्वि दर का लक्ष्य 9 प्रतिशत का रखा गया था। परन्तु वास्तविक वृद्वि दर 7.8 प्रतिशत की रही है। इसमें पिछली दो योजनाओं की तुलना में वृद्धि दर ज्यादा रही थी।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना

इस योजना का लक्ष्य तीव्र, अधिक समावेशी एवम् सतत् वृद्धि का था।

4.6 बाजार निर्देशित अर्थव्यवस्था में योजना

बाजार निर्देशित अर्थव्यवस्था कीमत – तन्त्र से चलती है। उसको स्वतन्त्र बाजार अर्थव्यवस्था और पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के नाम से भी जाना जाता है। कुछ अर्थशास्त्री यह मानते हैं कि कीमत तन्त्र में ही काम करता है। नियोजित अर्थव्यवस्था में यह काम नही करता है। इसलिए कीमत – तन्त्र नियोजित अर्थव्यवस्था में यह काम नही करता है। इसलिए कीमत तन्त्र नियोजित अर्थव्यवस्था में नही रहता है। परन्तु नियोजित समाजवाद के समर्थको के अनुसार संतुलित कीमतें है लेखाकंन कीमतें है। इसलिए यह आर्थिक नियाजन में यह काम करता है। कीमत संयंत्र एक ऐसी प्रणाली है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति साधनों के मालिक की हैसियत सें आर्थिक क्रिया में शामिल होता है। सबको अपने व्यवसाय चुनने की स्वतन्त्रता होती है। किसी भी वस्तु या साधन की कीमत उनकी मांग या पुर्ति की शक्तियों दवारा निधारित होती है। ऐसा करने से निर्धारित लक्ष्य अधिकतम होते है। परंतु कीमन संयंत्र की बहुत सारी मान्यताएँ होती है जैसे कि पूर्ण प्रतियोगिता क्रेताओ को विक्रेताओं का पूर्ण ज्ञान होना आदि। हम जानते है कि कीमत यंत्र का सिद्धात मुख्यता स्वतंत्र बाजार वाली व्यवस्था से संबधित है। कुछ अर्थशास्त्री मानते है की यह अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में काम नही कर सकता है। एक मत के अनुसार कीमत यंत्र को साधनों के इष्टतम प्रयोग के लिए स्वतंत्र छोड देना चाहिए। क्योकि यह उत्प्ररेणा प्रदान करने का काम करता है। स्वंतत्र बाजार व्यवस्था प्रौघोगिक सुधार करने की भी प्रेरणा देता है। जिससे की एक उत्पादक की लागत भी कम हो जाती है। ऐसा होने से आर्थिक विकास की गति तेज हो जाती है। दुसरा मत कीमत संयंत्र में भी नियोजन की बात करता है। यह तब होता है जब कीमत संयंत्र से बाजार की अपुर्णताएँ दूर नही होती है। ऐसा होने पर कीमत संयंत्र समस्याओं का समाधान करने में असमर्थ रहता है। ऐसा होने पर यह व्यवस्था सरकार को अपने हाथ मे ले लेनी चाहिए। इसके बाद जो कीमत संयंत्र मे सुधार आवश्यक हो वे सुधार करने चाहिए। यह मत आज के समय ज्यादा प्रभावी है। क्योकि संसार में कोई भी देश नही जहां कीमत संयंत्र बिना किसी कमी के अपना काम कर रहा है।

4.7 अर्न्तजात वृद्धि

नव –क्लासिकी सिद्धात ने वृद्धि को निर्धारित करने वाले तत्वो की व्याख्या की है। परन्तु सन् 1985 के कई सारे देशों मे यह सिद्धात वृद्धि को निर्धारित करने वाले तत्वों की व्याख्या नही कर पाया था। नव – क्लासिकी सिद्धान्त वृद्धि को निर्धारित करने के लिए तकनीकी परिवर्तन को बहिर्जात तत्व मानते है। इस प्रकार नव – क्लासिकी सिद्धान्त विभिन्न देशों में अलग – अलग वृद्धि दर की व्याख्या नही कर पाया है।

अर्न्तजात वृद्धि मॉडल में तकनीकी परिवर्तन को अन्तर्जात कारक मानते है। इसको निर्धारित करने के लिए विभिन्न मॉडल ने इसकी व्याख्या की है।

1. AK मॉडल

AK मॉडल जनसंख्या या श्रमिकों की संख्या को स्थिर मानते है। ऐसा मानने से अर्थव्यवस्था में उत्पादन की वृद्धि दर और प्रति श्रमिक उत्पादन की वृद्धि दर स्थिर रहती है।।K मॉडल में निम्नलिखित उत्पादन फलन को लिया गया है।

$$Y=AK$$

Y = कुल उत्पाद

A = धनात्मक स्थिरांक

K = कुल पूंजी स्टॉक

AK मॉडल का उत्पादन फलन पूंजी स्टॉक में वृद्धि का प्रभाव उत्पादन पर दिखाते है। स्थिरांक। पूंजी की सीमान्त उत्पादकता को दिखाता है।।K मॉडल अनुसंधान और विकास का महत्व उत्पादन पर बताता है। यह मॉडल बचत का दीर्घकाल की वृद्धि पर प्रभाव दिखाता है। ज्यादा बचत होने से ज्यादा पूंजी निर्माण होगा। ऐसा करने से अर्थव्यवस्था में उत्पादकता को बढाता है। सोलो मॉडल के विपरीत अर्न्तजात वृद्धि मॉडल बचत, मानवीय पूंजी और अनुसंधान क्रियाओं पर ज्यादा ध्यान देने से दीर्घकाल में वृद्धि दर बढ जाती है।

2. रोमर माडल

रोमर मॉडल अर्न्तजात तकनीकी परिवर्तन का निर्धारक तत्व लेकर चलते है।

$Y_t=F(K_t, N_t,A_t)$

K_t= पूंजी

W_t= श्रम

A_t= तकनीक

तकनीकी यहां पर अर्न्तजात तत्व है। परन्तु यहां पर उत्पादन और तकनीकी में जो सम्बन्ध है वह सम्बन्ध उत्पादन का श्रम और पूंजी के साथ सम्बन्ध है। नव – क्लासिकी सिद्धान्त यह मानते है कि श्रम और पूंजी का उत्पादन पर समान प्रतिफल का प्रभाव पडता है। परन्तु अन्तर्जात वृद्धि मॉडल ने केवल श्रम और पूंजी का उत्पादन पर प्रभाव नही पडता बल्कि तकनीकी परिवर्तन का भी उत्पादन पर प्रभाव पडता है। तकनीकी परिवर्तन से उत्पादन ज्यादा दर से बढता है। ऐसा होने से उत्पादन बढते प्रतिफल की दर से बढता है। बढते प्रतिफल की दर होने से उत्पादन में बढने की दर ज्यादा होती है और साधन बढने की दर कम होती है। पैमाने की बढती दर होने से बचत की दर भी बढ जाती है। ऐसा होने से पूंजी निर्माण की दर बढ जाती है। पूंजी निर्माण की दर बढने से दीर्घकालीन वृद्धि दर भी बढ जाती है। जबकि नव – क्लासिक ग्रोथ सिद्धान्त में बचत दर का अर्थव्यवस्था पर अस्थायी प्रभाव पडता है। अन्तर्जात वृद्धि मॉडल में यह भी बताया है कि वृद्धि दर को बढाने के लिए सरकार को प्रयत्न करना चाहिए। जैसा कि हमने पीछे पढा है कि तकनीकी परिवर्तन से पैमाने के बढते प्रतिफल मिलते है। इसलिए सरकार की नीतियों से बचत दर बढती है जिससे पूंजी निर्माण की दर बढती है और दीर्घकाल वृद्धि दर अर्थव्यवस्था में बढ जाती है।

4.8 शिक्षा, अनुसंधान और ज्ञान की भूमिका विभिन्न देशों के वृद्धि और विकास के अन्तर के रूप में

नई वृद्धि सिद्धान्त में जो निष्कर्ष आए है वो नव – क्लासिकी सिद्धान्त से अलग है। नव – क्लासिकी सिद्धान्त यह बताता है कि अगर विभिन्न देशों में बचत और जनसंख्या की वृद्धि दर एक जैसी है और तकनीकी परिवर्तन भी एक जैसा है तो दीर्घकाल में उनके विकास का स्तर एक जैसा होगा। परन्तु नई वृद्धि सिद्धान्त में उनकी अलग – अलग संवृद्धि को बताया गया है। और अलग विकास के स्तर को बताया है। यह परिणाम पैमाने के बढते प्रतिफल के नियम के कारण होता है। क्योंकि मानवीय पूंजी, अनुसंधान में निवेश करने से दो देशों के विकास के स्तर मे। परिवर्तन हो सकता है।

यह सिद्धान्त बताता है कि ज्यादा बचत की दर होने से दीर्घकाल की वृद्धि दर भी ज्यादा होगी, परन्तु हम यह निष्कर्ष नही निकाल सकते कि विकसित और विकासशील देशों में प्रति व्यक्ति आय भी समान हो जाएगी। यह अन्तर काफी कारकों जैसे बढते प्रतिफल के नियम, भौतिक और मानवीय पूंजी आदि पर निर्भर करता है।

4.9 सारांश

योजना का आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान होता है। अल्पविकसित देशों के पास संसाधनों की सीमित मात्रा होती है। इस सीमित मात्रा का प्रत्येक देश विवेकपूर्ण प्रयोग करना चाहता है। विवेकपूर्ण प्रयोग के लिए योजना महत्वपूर्ण हो जाती हे। योजना में उपलब्ध साधनों से अधिकतम उत्पाद या परिणाम पर विचार किया जाता है। योजना के लिए विभिन्न प्रकार के मॉडल हो सकते है। जैसे की भारत में योजना आयोग ने पहली पंचवर्षीय योजना में हैरोड – डोमार संवृद्धि मॉडल का प्रयोग किया था। इसके बाद दूसरी पंचवषीर्य योजना में महालनोविकस मॉडल का प्रयोग किया था। इन मॉडलों में तकनीक का चुनाव भी शामिल होता है। तकनीक का चुनाव करना अल्पविकसित देशों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

4.10 मुख्य शब्दावली

- **आर्थिक नियोजन –** आर्थिक नियोजन में साधनों का सुनियोजित ढंग से प्रयोग किया जाता है। आर्थिक नियोजन एक ऐसी तकनीक है जिससे की वांछित लक्ष्य पूरे किए जाते है।
- **योजना मॉडल –** किसी भी योजना के वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कुछ चरों में आपसी सम्बन्धों को दिखाने के लिए और कुछ मान्यताओं को माना जाता है जिन्हें हम योजना मॉडल कहते है।
- **रोमर माडल –** रोमर मॉडल अन्तर्जात तकनीकी परिवर्तन का निर्धारक तत्व लेकर चलते है। तकनीकी यहां पर अन्तर्जात तत्व है।
- **कीमत संयंत्र** – कीमत संयंत्र एक ऐसी प्रणाली है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति साधनों के मालिक की हैसियत से आर्थिक क्रिया में शामिल होता है।
- **ए0 के मॉडल** – ऐ0 के0 मॉडल जनसंख्या या श्रमिकों की संख्या को स्थिर मानते है। ऐसा मानने से अर्थव्यवस्था में उत्पादन की वृद्धि दर और प्रति श्रमिक उत्पादन की वृद्धि दर स्थिर रहती है।

4.11 अपनी प्रगति जानिए के प्रश्न

1 प्रथम पंचवर्षीय योजना ..... में शुरू हुई थी।

2 प्रथम पंचवर्षीय योजना ..... के माडल पर आधारित थी।

3 दूसरी पंचवर्षीय योजना ..... माडल पर आधारित थी।

4 तृतीय पंचवर्षीय योजना मॉडल सुखमय – चक्रवर्ती के ..... मॉडल पर आधारित थी।

5 तीसरी योजना में जनसंख्या – वृद्धि दर को ..... माना गया।

6 चौथी पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल ..... से ..... तक रहा।

7 पांचवी पंचवर्षीय योजना में GDP की ..... वृद्धि दर का लक्ष्य रखा गया।

8 सातवी पंचवर्षीय योजना की वृद्धि दर ..... की रही।

9 आठवी पंचवर्षीय ..... मॉडल पर आधारित है।

10 नौवी पंचवर्षीय योजना ..... पर बल दिया गया है।

4.12 अपनी प्रगति जानिए के उत्तर

1 1951
2 हैरोड – डोमर
3 महालनोबिस
4 आगत – निर्गत
5 2 प्रतिशत
6 1 अप्रैल 1964 से 31 मार्च 1974
7 5.5 प्रतिशत
8 5.8 प्रतिशत
9 जान डब्ल्यु
10 निर्देशात्मक मॉडल

4.13 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1 आर्थिक नियोजन से क्या अभिप्राय है ?
2 आर्थिक नियोजन की मुख्य विशेषताएं बताइए ?
3 वित्तीय आयोजन क्या है ?
4 दृष्ट आयोजन क्या है ?
5 भौतिक आयोजन क्या है ?
6 निर्देशक द्वारा आयोजन से क्या अभिप्राय है। ?
7 योजना मॉडल से आप क्या समझते है ?
8 रोमर मॉडल क्या है ?
9 ए0 के0 मॉडल क्या है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1 अल्पविकसित देशों में आर्थिक नियोजन की आवश्यकता की व्याख्या कीजिए।
2 आर्थिक नियोजन की परिभाषा बताइए और उसकी मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3 एक नियोजित अर्थव्यवस्था और एक बाजार अर्थव्यवस्था में मुख्य रूप से क्या अन्तर है? विस्तार से बताइए ?
4 सातवी और आठवी पंचवर्षीय योजनाओं के मॉडलों की विस्तार से व्याख्या करे।
5 भारत की योजना में मूल न्यनूतम आवश्यकताओं की नीति क्यों अपनानी पडी ? व्याख्या करे।

4.14 आप ये भी पढ़ सकते है एवम् सन्दर्भ सूची

- Ahuja, H.L. (2017). Development Economics (Ist Edition). New Delhi S. Chand & Company Pvt. Ltd.
- Jhingan, M.L. (2004). The Economics of DevelopmentAnd Planning (4^{th} edition). New Delhi : Vrinda publication Pvt. Ltd. Hindi medium
- Puri, V.K. & Mishra, S.K. (2019). Indian Economy (37th edition). Mumbai : Himalaya Publishing House Pvt. Ltd.

- Mishra, S.K. & Puri, V.K. (2006). Economics of DevelopmentAnd Planning (12th edition). Mumbai : Himalya Publisnig House
- Singh, S.P. (2007). Economic DevelopmentAnd Planing (21st Edition). New Delhi : S.Chand & Company Ltd. (Hindi Medium)
- Todaro, M.P. & Smith, S.C. (2012). Economic Development (11th Edition). Boston :Addision - Wesley
- Thirlwal,A.P. (2006). Growth & Development (8th Edition). Palgrave Macmillan. Hampsnire
- Taneja, M.L. & Myer, R.M. (2014). Economics of Development & Planning (2nd Edition). Jalandhar. Vishal Publishing Co. (Hindi Medium)